लक्ष्मण की नगरी लखनऊ

लेखक

डॉ० बैकुण्ठनाथ शर्ग़ा

एम०एससी०, पीएच–डी०

SP

SHARGA PUBLICATIONS

Manohar Niwas
Kashmiri Mohalla
Lucknow- 226 003

- प्रकाशक :

  विनय शर्ग़ा

  394 / 20 कश्मीरी मुहल्ला
  लखनऊ–226 003

- प्रथम संस्करण : 2009

- सहयोग राशि : केवल 50/- रुपये

- सर्वाधिकार सुरक्षित

- **मुद्रक :**

  शारदा प्रिंटिंग प्रेस

  नया गांव पूर्व, मॉडल हाउस,
  लखनऊ
  दूरभाष : 2629327

समर्पण

श्रीमती राजवन्ती शर्ग़ा

(1917 - 2004)

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्तयापो न शोषयति मारुतः।।

संतुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मित्रेतत्कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।।
यदि हि स्त्री न रोचेत पुमांसं न प्रमोदयेत्।
अप्रमोदात्पुनः पुंसः प्रजनं न प्रवर्तते।।

There is unwavering good fortune in a family where the husband is always satisfied by the wife, and the wife by the husband. If the wife is not radiant she does not stimulate the man; and because the man is unstimulated the making of children does not happen

आमुख

प्रायः यह कहा जाता है कि लखनऊ एक नगर नहीं अपितु एक तहज़ीब का नाम है। अनेकों विद्वानों, कथाकारों, इतिहासकारों तथा विदेशी पर्यटकों ने लखनऊ को अपनी पुस्तकों में अपने–अपने द ष्टि कोण से प्रस्तुत किया है। अधिकांश लेखकों ने नवाबी युग के 134 वर्ष के अन्तराल को केन्द्र बिन्दु मानकर अपना ताना–बाना बुना है जबकि लखनऊ एक अति प्राचीन नगर है जिसका लगभग 8000 वर्ष पुराना गौरवमय इतिहास है जिसके अनछुए पहलुओं को खंगालने की आवश्यकता है।

आज के युग में विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। अंतरिक्ष विज्ञान द्वारा ब्रह्माण्ड में नये – नये ग हों और नक्षत्रों को खोज निकाला जा रहा है। उनकी प थ्वी से दूरी आंकी जा रही है। उन पर जीवन की सम्भावनाओं का पता लगाया जा रहा है। मानव सभ्यता के करोड़ों वर्ष के इतिहास का पता लगाने में शोध कार्य हो रहा है तो फिर लखनऊ का वास्तविक इतिहास खोज निकालने में हमारे वैज्ञानिक, इतिहासकार और पुरातत्वविद् क्यों नहीं रूचि ले रहे हैं और वो ही घिसी–पिटी बातें बार–बार दोहराई जाती हैं। यह साफ दर्शाता है कि कहीं न कहीं द ढ़ इच्छा शक्ति की कमी है।

इस पुस्तक में कुछ इन्हीं मुद्दों को ध्यान में रखकर लखनऊ को एक बिलकुल नये परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। पुस्तक के लेखन के लिये लगभग 10 वर्ष का कठोर परिश्रम करके सामग्री विभिन्न स्रोतों से जुटाई गयी है जिसमें बाबू गंगा प्रसाद मेमोरियल पुस्तकालय के पुस्ताकालाध्यक्ष सैय्यद इरशाद अली ने न केवल लखनऊ के बारे में महत्वपूर्ण जानकारियां दी अपितु समय–समय पर इस पुस्तक के कलेवर को सवांरने के लिये अनेक मूल्यवान तथा उपयोगी सुझाव भी दिये ताकि यह पाठकों के लिए रोचक और ज्ञानवर्धक बन सके। जिसके लिये मैं उनका आभारी हूँ अन्यथा कदाचित मेरे लिये यह पुस्तक लिखना सम्भव नहीं हो पाता।

मैने इस पुस्तक में जहां तक सम्भव हो सका है चीजों का सही और निषपक्ष आंकलन कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। लखनऊ जैसे प्राचीन नगर के व हद इतिहास को एक सीमित सीमा में समेटना काफी कठिन कार्य था फिर भी यदि भूल से कहीं त्रुटि या अन्य कोई कमी इस छोटे से प्रयास में रह गई हो तो उसके लिये मैं क्षमा प्रार्थी हूं। आशा है कि पाठकगण इस सार्थक प्रयोग की एक साकारात्मक द ष्टी से विवेचना करेंगे।

'मनोहर निवास'
कश्मीरी मुहल्ला
लखनऊ–226 003
दूरभाष : 0522–2267146, 6590379
20 अप्रैल 2009

● **डॉ० बैकुण्ठनाथ शर्ग़ा**
अवध के वसीकेदार

ब्रह्माण्ड का निर्माण

हमारे ऋषियों तथा मुनियों ने, अपनी कठोर तपस्या तथा एकाग्र साधना के बल पर विभिन्न विषयों का न केवल ज्ञान प्राप्त किया अपितु उन पर जीवन पर्यन्त अनुसन्धान करके अनेक शोध प्रबन्ध लिपिबद्ध किये जिनको जनमानस तक पहुंचाने के लिए धर्म ग्रन्थ की संज्ञा दी गई। वे वास्तव में हमारे, अपने मौलिक दार्शनिक और वैज्ञानिक थे पर सदियों तक दासता के बन्धनों के कारण हम उनके अपार ज्ञान के भण्डार का उचित लाभ लेने से वंचित रह गये। जब कोई भी समाज हज़ारों वर्ष दासता की जंजीरों में जकड़ा रहता है तो उसमें स्वतंत्र रूप से निष्पक्ष होकर चिंतन करने की शक्ति का नाश हो जाता है वह बुद्धिहीन और विवेकहीन होकर एक तोते के समान जो कुछ उसको रटाया जाता है वह टॉय टॉय करके उसको दोहराने लगता है क्योंकि वह मानसिक रूप से दिवालिया हो चुका होता है। उसमें चीज़ों को कसौटी पर कसने और उनकी सत्यता का पता लगाने का साहस नहीं रहता। वह एक प्रकार से 'रोबट' के समान हो जाता है जो किसी अन्य व्यक्ति के निर्देश पर कार्य करता है। जिसके पास उसकी कमान होती है।

हमारे ऋषियों तथा मुनियों ने ब्रह्माण्ड के निर्माण के सम्बन्ध में एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात बहुत ही सहज रूप से सरल भाषा में एक छोटे से सूत्र में कह दी न थे जब वेद और ब्रह्मा हुआ तब शब्द ओंकारा अर्थात जब ब्रह्मा ने स ष्टि की रचना आरम्भ नहीं की थी तब एक तीव्र ध्वनि के साथ ओम का शंखनाद हुआ और ब्रह्माण्ड का निर्माण हुआ। या दूसरे शब्दों में एक बहुत बड़े धमाके या विस्फोट के पश्चात ब्रह्माण्ड अस्तित्व में आया।

इस ज़ोरदार धमाके या विस्फोट को वैज्ञानिकों ने बिग बैंग की संज्ञा दी पर वास्तव में उनके लिये ब्रह्माण्ड का निर्माण अब भी एक बहुत बड़ा रहस्य बना हुआ है। इसकी बनावट, आकार, तारों तथा ग्रहों की संख्या, इसकी अपार दूरी तथा द व्यमान का ठीक से पता लगाना एक बहुत टेढ़ी खीर है। पर वैज्ञानिक जगत में अब तक सबसे अधिक मान्यता बिग

बैंग के सिद्धांत को ही मिल पायी है। जिसको सर्वप्रथम बेल्जियम के जार्ज लेमेहेर नाम के एक खगोल शास्त्री एवं पादरी ने प्रतिपादित किया था। उसने किस आधार पर ऐसी टिप्पणी की यह स्पष्ट नहीं है। इस सिद्धांत के पक्ष में सबसे अधिक महत्वपूर्ण और विश्वसनीय प्रमाण वैज्ञानिक एडविन हबल द्वारा दिये गये।

इस वैज्ञानिक सिद्धांत के अनुसार ब्रह्माण्ड की रचना लगभग 15 अरब वर्ष पूर्व सम्भव हो सकी जब हमारा ब्रह्माण्ड धनीभूत अवस्था में एक बिन्दु के समान था। स ष्टि के सारे तत्व एवं उर्जा यह बिन्दु अपने में समेटे हुए था। इस बिन्दु में एक महाविस्फोट हुआ और उसके पश्चात उसने एक विकराल रूप में फैलना आरम्भ किया। इसके टूटे हुए अंश फोटौन और लैप्टकार्क ग्लुआन अंतरिक्ष में दूर तक बिखर गये जिनसे आकाशगंगायें, तारे, नक्षत्र तथा ग्रह अस्तित्व में आये और यह आकाशगंगायें निरन्तर विकास कर रही हैं। एडविन हबल ने इस तर्क को 1424 में पहली बार वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध किया कि ब्रह्माण्ड में लगातार विकास हो रहा है और आकाशगंगायें हमसे निरन्तर दूर होती जा रही हैं। इस आधार पर हमारी प थ्वी ब्रह्माण्ड के ठण्डे पड़ने के पश्चात अस्तित्व में आयी। ब्रह्माण्ड के रहस्य की गुत्थी को सुलझाने के लिये 10 सितम्बर 2008 को जनेवा के निकट विश्व के विभिन्न देशों के लगभग 15 हजार नामचीन वैज्ञानिकों के एक दल ने डा० लिन इवान्स के नेत त्व में एक महाप्रयोग किया। जिसमें धरती के भीतर 60 फीट की गहरायी में 27 किलोमीटर लम्बी सुरंग बना कर 3.8 अरब डालर की लागत में बनी लार्ज हेड्रान कोलाइडर तथा अन्य वैज्ञानिक उपकरण लगा कर वहीं परिस्थितियां उत्पन्न की गयीं जो ब्रह्माण्ड के निर्माण के पूर्व थीं। यह भौतिक विज्ञान के जगत में अब तक का सबसे बड़ा प्रयोग था। जिसमें प्रोटानों को टकराने के पश्चात उत्पन्न स्थिति का गहराई के साथ अध्ययन किया गया। वहां से हज़ारों मील दूर अमरीका के शिकागो नगर में बैठे वैज्ञानिकों ने शैम्पेन की बोतल खोल कर प्रसन्नचित होकर कहा सब कुछ ठीक–ठाक हो गया। क्या ठीक ठाक हो गया यह किसी को पता नहीं।

स ष्टि की रचना

विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद को माना जाता है। ऋग्वेद के स ष्टि सूक्त (14,12,9) जिसमें सात मंत्र हैं कवि परमेष्ठी जो ब्रह्मा का नाम है बड़े ही दार्शनिक भाव से स ष्टि के पहले क्या था का उत्तर देता है – न तो, असत्य था और न ही सत् था न तो कोई बस्ती कहीं बसी हुई थी और न ही कोई अनन्त आकाश कहीं फैला हुआ था। न ही गम्भीर गहरा पानी सब ओर बह रहा था। न तो उस समय म त्यु का साम्राज्य था न ही अमरता का कोई असर था। न रात थी न दिन का कोई भान था। न तो तब प्राण का कहीं कोई संचार था और न ही बात हीनता थी। तब सब जगह अंधेरा ही अंधेरा था। सब तरफ काम ही काम था। या फिर रोशनी की रेखा खिंची पड़ी थी। वह आड़ी भी थी तिरछी भी ऊपर भी थी और नीचे भी। अर्थात एक असमंजस की स्थिति थी। जिसके पश्चात जब शक्ति ने सौंदर्य का हाथ थामा तब स ष्टि की संरचना हुई। वास्तव में यह लौकिक प्रकृति का सौंदर्य के साथ मिलन स ष्टि का ज्ञात रूप है। अपने आलम्बन आधार में शक्ति शारीरिक उर्जा की प्रतिक्रिया है जबकि सौन्दर्य व्यक्तित्व की आकांक्षा। शक्ति सौंदर्य का श्रेय है और सौंदर्य शक्ति का प्रेय। इस सम्बंध में भवभूति ने बहुत सटीक लिखा है कि स ष्टि संयोजन चाहती है। उसका मूल आधार संयोग में है। इसलिये स ष्टि में समन्वय की प्रतिष्ठा ही सर्वोपरि है। यह विलोपन जब अपने उत्कर्ष पर होता है तो वह अवस्था समरसता की होती है जहां सारे भेद स्वतः समाप्त हो जाते हैं और ब्रह्मानन्द की, अनुभूति होती है।

मानव सभ्यता का विकास

प थ्वी के अरबों वर्ष पूर्व अस्तित्व में आने के पश्चात उस पर मानव का विकास कब और कैसे सम्भव हो सका इसकी वैज्ञानिक आधार पर अब तक कोई पुष्टि नहीं हो सकी है। किस प्रकार मानव की विभिन्न नस्लें एवं जातियां अस्तित्व में आई यह पहले मुर्गी आई की अण्डा के समान एक पहेली बना हुआ है। विख्यात ब्रिटिश प्रकृति वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन के सिद्धांत के

अनुसार मानव जाति का विकास बन्दर से हुआ। कदाचित संसार के समस्त प्राणियों में उसने हाव–भाव में बन्दर को ही मानव के सबसे निकट पाया। विश्व के प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थों वेदों और पुराणों के अनुसार ब्रह्मा ने स ष्टि की रचना की जो स्वयं विष्णु की नाभि से प्रकट हुए उन्होंने प्रथम पुरूष मनु तथा प्रथम स्त्री शतरूपा की अपनी दैविक शक्ति के द्वारा रचना की। ब्रह्मा के साथ विद्या की देवी सरस्वती तथा ज्ञान की देवी गायत्री अवतरित हुई। प थ्वी पर मानव

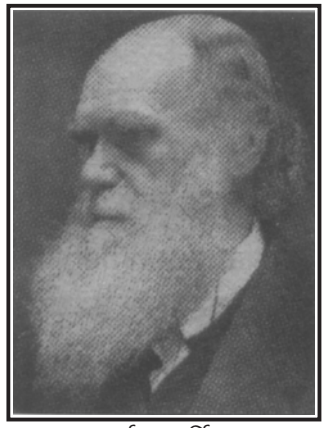

चार्ल्स डर्विन

जाति के समुचित विकास के लिए ब्रह्मा ने अपनी दैविक शक्ति का प्रयोग करते हुए लगभग 12 पुत्र उत्पन्न किये। ब्रह्मा ने ही हमारे सात महान ऋषियों कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वामित्र, गौतम तथा दत्तात्रेय को अपने पुत्रों के रूप में इस धरती पर भेजा। ब्रह्मा के मानस पुत्रों में प्रमुख मारीची, अग्नि, अंगीरा, प्लात्सय, पुलाहा, केतु, वशिष्ठ, दक्ष एवं नारद हैं। इनमें दक्ष का विवाह प्रस्तुति के साथ सम्पन्न हुआ था। जिन्होंने 16 पुत्रियों को जन्म दिया जिनमें 13 के नाम हैं श्रद्धा, दया, शान्ति, त्रिपुती, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, प्रितिक्षा, लज्जा एवं मूर्ति। दक्ष की इच्छा के विरूद्ध उनकी पुत्री सती ने शिव के साथ विवाह किया। दक्ष ने ऋषि भ गु के नेत त्व में प्रयाग में एक यज्ञ का आयोजन किया। जिसमें उसने शिव को भांग लेने के लिए आमंत्रित नहीं किया। सती के, आग्रह पर शिव वहां गये पर दक्ष ने उनका घोर अपमान किया। सती ने आहत होकर यज्ञ की अग्नि में छलांग लगा दी जिसके पश्चात शिव ने क्रोध में तांडव आरम्भ कर दिया और दक्ष तथा उसके समर्थकों का संहार कर दिया। अन्य अतिथि शिव के क्रोध से बचने के लिये वहां से भाग खड़े हुए।

मानव सभ्यता के विकास की इस कड़ी में 2 मार्च 2009 को प्रकाशित समाचार कें अनुसार मैथ्यु बेनेट के नेत त्व में वैज्ञानिकों के एक दल को उत्तरी केन्या के लेहेद नामक स्थान पर एक अति प्राचीन झील की खुदाई में आज से लगभग 15 लाख वर्ष पूर्व रहने वाले मानवों के पद चिह्न प्राप्त हुए हैं। इन

पद चिन्हों की लेज़र स्कैनिंग से यह पता चला है कि उस समय का मानव भी आज के मानव की तरह चलना फिरना जानता था और अपने दोनों पैरों पर सीधा चलता था।

वैज्ञानिक शोध द्वारा यह प्रमाणित किया गया है कि होमो इरेगस्टर हमारी ही तरह लम्बे पांव रख कर चलते थे। उनके पैरों में भी चार अंगुलियां एवं एक अंगूठा होता था। होमो इरेगस्टर अपने भार को एड़ी की मदद से पैर से अंगुली तक पहुँचा कर चलते थे।

ये पद चिह्न अब तक मिले पद चिह्नों में सबसे नवीनतम हैं। इस से पूर्व तंजानियां में 37½ लाख वर्ष प्राचीन पद चिह्न प्राप्त हुए थे। यह खोज 30 वर्ष पूर्व 1978 में की गई थी जिसके बारे में माना जाता है कि यह पद चिह्न आस्ट्रेलोपिकेथस के हैं। वे भी अपने पैरों पर सीधे चलते थे। केन्या के पास जो पद चिह्न मिले हैं वे ठोस सतह पर पाये गये हैं जहां अनुमान किया जा रहा है कभी कच्ची मिट्टी रही होगी। इन खोजों से इस बात की पुष्टि होती है कि 15 लाख वर्ष पूर्व भी मानव इस धरती पर अपने पैरों पर सीधा चलता था जो डार्विन के सिद्धांत से ताल–मेल नहीं खाता है।

राजवंशों की परम्परा

वैवस्वत मनु प्रथम आर्य राजा थे, जिनका साम्राज्य आर्यव त कहलाया। उनकी पत्नी का नाम शतरूपा था। मनु के बड़े पुत्र इक्ष्वाकु के वंशजों से सूर्यवंशी राजाओं तथा मनु की पुत्री इला के वशंजों से चन्द्रवंशी राजाओं की परम्परा आरम्भ हुई। ऋग्वेद (10.17.8) के अनुसार मनु की टक्कर का कोई दानवीर राजा नहीं हुआ। अयोध्या उनकी राजधानी थी। इक्ष्वाकु की 19 वीं पीढ़ी के पश्चात मान्धाता अयोध्या के चक्रपर्ती सम्राट बने उनका पुत्र पुरूकुस अयोध्या का राजा बना जिसकी 41वीं पीढ़ी बाद अयोध्या में दानवीर हरिश्चन्द्र का शासन काल आरम्भ हुआ। उनकी 41 वीं पीढ़ी में राजा सागर अयोध्या के शासक बनें। उनकी दो पत्नियां कृष्ण और सुमति थीं। पहली पत्नी से उन्हें केवल एक पुत्र अंशुमान तथा दूसरी पत्नी सुमति से 60,000 पुत्र थे। जब राजा सागर ने चक्रवती सम्राट बनने के लिये अश्वमेध यज्ञ का घोड़ा छोड़ा

तो इन्द्र ने उसे चुरा कर कपिल मुनि के आश्रम में छुपा दिया। जब राजा सागर ने उस घोड़े का पता लगाने के लिये अपने 60 हज़ार पुत्रों को भेजा तो उस समय कपिल मुनि कठोर तपस्या में लीन थे। उनकी तपस्या भंग हो जाने के कारण उन्होंने क्रोध में शाप देकर राजा सागर के 60 हज़ार पुत्रों को भस्म कर दिया। राजा सागर ने तब अपने पुत्र अंशुमान को कपिल मुनि के आश्रम क्षमा याचना के लिये भेजा जिन्होंने कठोर तपस्या करके स्वर्ग से पवित्र गंगा को लाने का सुझाव दिया ताकि उसके पुत्रों को मोक्ष प्राप्त हो सके। राजा सागर की अपने पुत्रों के वियोग में म त्यु हो गयी।

अंशुमान ने तब अपने पुत्र के साथ गंगा को प थ्वी पर अवतरित करने के लिये घोर तपस्या आरम्भ की पर किन्हीं कारणों से उनको अपने लक्ष्य में सफलता नहीं मिल सकी। इक्ष्वाकु वंश की 45 वीं पीढ़ी में अयोध्या के शासक चक्रवर्ती सम्राट भगीरथ बने जिन्होंने अपनी कठोर तपस्या के बल पर गंगा नदी को अवतरित कराकर अपने पूर्वजों की भटकती हुई आत्माओं को मोक्ष दिलाया। इसी कुल की 60 वीं पीढ़ी में दिलीप अयोध्या के एक प्रतापी शासक बने जिन्होंने अपने साम्राज्य की सीमा का पश्चिम में उज़बेकिस्तान तक विस्तार किया। राजा दिलीप के पौत्र रघु और अधिक प्रतापी शासक हुए जिनके पश्चात रघुवंशी शब्द का चलन आरम्भ हुआ। वे अपनी बात के धनी व द ढ़ निश्चय वाले व्यक्ति थे जिनकी महिमा का गुणगान महाकवि तुलसीदास ने कुछ इस प्रकार किया है।

रघुकुल रीति सदा चली आई।
प्राण जांय पर वचन न जाई।।

सम्राट रघु ने ईरान और अफग़ानिस्तान के क्षेत्र पर अपनी विजय पताका फहराई। ईरान में उस काल में पुलस्त्य ऋषिवंशी दशाग्रीव रावण का राज्य था। ये लोग मूल रूप से ब्राह्मण थे परन्तु अनाचार और कलह प्रिय होने के कारण सूर्यवंशी राजाओं के शत्रु थे। ये होतिमन हिट्टी कहलाते थे तथा इनको असुर या दानव श्रेणी में रखा जाता था क्योंकि यह उतने सुसंस्कृत नहीं हो सके थे जितने आर्य थे। इनका शासन अफ्रीका, मिस्र, अफगानिस्तान, सिन्ध तथा पंजाब तक था।

राजा रघु के पुत्र, अज तथा राजा अज के पुत्र राजा दशरथ, अयोया के शासक बने जिनकी म त्यु के उपरान्त उनके ज्येष्ठ पुत्र श्रीराम ने अयोध्या के शासन की बागडोर अपने हाथों में संभाली। (डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकर, प्राचीन भारतीय इतिहास में वैदिक युग, प ष्ठ सं० 150)

काल खण्ड की गणना

हमारी प थ्वी पर मानव सभ्यता के सम्पूर्ण विकास के इतिहास को हमारे धर्म ग्रन्थों में चार भागों में विभाजित किया है। पहला सतयुग, दूसरा त्रेतायुग, तीसरा द्वापर युग और चौथा कलयुग जो आजकल चल रहा है। यह सर्वविदित है कि श्रीराम का जन्म त्रेतायुग के अन्तिम चरण में भारतीय चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में नवमी तिथि को हुआ था तथा श्री कृष्ण का जन्म द्वापर युग के अन्तिम चरण में भारतीय भाद्र मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को हुआ था पर उनके वर्ष निर्धारित नहीं है जबकि इन दोनों काल खण्डों से सम्बंधित महाकाव्य महर्षि बाल्मीकि द्वारा रचित रामायण तथा महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत उपलब्ध है। जिन पर उचित शोधकार्य करके दोनों काल खण्डों को निर्धारित किया जा सकता है।

यह हमारा दुर्भाग्य है कि हज़ारों वर्ष की दासता के कारण हमारी सरकार ने मौलिक शोध कार्य की ओर कभी कोई विशेष ध्यान नहीं दिया और उसके लिए धन व्यय करना कभी महत्वपूर्ण नहीं समझा जिसके कारण हम ज्ञान के क्षेत्र में विकसित पाश्चात्य देशों की तुलना में निरन्तर पिछड़ते चले गये और कूप मण्डूक बनकर रह गये। हम आज तक यह न समझ पाये कि आखिर हमारा वास्तविक इतिहास है क्या क्योंकि हर वर्ष विद्यार्थियों को इतिहास की पुस्तकों में एक बिलकुल नये रूप और कलेवर के साथ हमारा इतिहास परोसा जाता है।

इसी संदर्भ में सुधी पाठकों को यह बताना अनुचित न होगा कि बुंन्देलखण्ड के शोधकर्ताओं के दल ने अपनी खोजबीन के आधार पर यह प्रमाण एकत्रित किये हैं कि महाभारत जैसे महाकाव्य के रचयिता महर्षि वेदव्यास का कार्य क्षेत्र प्रमुख रूप से हस्तिनापुर था। वे महाभारत के युद्ध के

पश्चात हस्तिनापुर के नरेश परिक्षित के पुत्र जनमेजय द्वारा करवाये गये नाग यज्ञ में उपस्थित थे। ने इस राजवंश की सात पीढ़ियों से जुड़े रहे। अब यदि एक पीढ़ी का औसत काल 30 वर्ष मान लिया जाये तो वे लगभग 250 वर्ष की आयु करके इस संसार से बिदा हुए। उनकी साधना स्थली बदरिका आश्रम थी जो सरस्वती और अलकनन्दा के संगम पर स्थित था जहां अब बदरीनाथ का तीर्थ है।

वेदव्यास का मूल नाम कृष्ण था पर उन्हें द्वैपायन का नाम दिया गया क्योंकि उनकी माता सत्यवती ने अपने कुंआरेपन में ऋषि पराशर से गर्भ धारण करने के पश्चात लोक लाज के भय से अपने शिशु को यमुना नदी के मध्य में स्थित उस द्वीप पर जन्म दिया जहां अपने पिता दशराज के अनुशासन में वे नाव चला कर जाती थीं। यह स्थान अद्रिका गांव आज की केन नदी के किनारे स्थित है जिसे विद्वानों ने सेहुड नाम से खोज निकाला है। चेदीमक्षी जनपद का ही नया नाम बुन्देलखण्ड है। विद्वान महर्षि वेदव्यास का जन्म स्थान जालौन ज़िले की कालपी तहसील को मानते हैं जहां 'व्यास शिला' नाम से एक पौराणिक स्थल मौजूद है। जहां सत्यवती ने अपने पुत्र को ऋषि पराशर को सौंपा था जिन्होंने उसको शिक्षा–दिक्षा देकर महर्षि वेदव्यास बनाया।

अमरीका की अन्तरिक्ष संस्था नासा के वैज्ञानिकों, विभिन्न गणितज्ञों, शोधकर्ताओं तथा भारत के महान कम्प्यूटर ज्योतिषि ए. बी. बंसल द्वारा की गयी शोध के अनुसार श्री कृष्ण का जन्म 21 जुलाई 3228 ईसा से पूर्व आंका गया है तथा उनकी म त्यु 18 फरवरी 3102 ईसा से पूर्व निर्धारित की गयी है। जिसके पश्चात कलयुग आरम्भ हुआ। विष्णु पुराण के अनुसार हस्तिनापुर (मेरठ) के विजयी राजा युधिष्ठिर का राज्यभिषेक कुरूक्षेत्र के मैदान में महाभारत के युद्ध के 10 दिन की समाप्ति के पश्चात किया गया था। जिससे महाभारत युद्ध का काल 3138 ईसा से पूर्व आंका जाता है। श्रीकृष्ण द्वारा बसाई गई द्वारका को वैज्ञानिकों ने गुजरात के तट के निकट, अरब सागर में खोज निकालने में सफलता प्राप्त कर ली है।

यह भी एक अजब आश्चर्य की बात है कि यद्यपि देश में रामायण के काल से जुड़े हुए अनेक प्रतीक और स्थल आज भी विद्यमान है पर उन पर

उचित शोध कार्य करके उनकी ऐतिहासिक प्रमाणिकता को हमारे वैज्ञानिकों, इतिहासकारों तथा पुरातत्वविदों ने कभी कोई आवश्यकता नहीं समझी हमारे राजनेताओं ने सदैव धर्मनिरपेक्षता की दुहाई देते हुए श्रीराम जैसे इतिहास पुरूष को सदैव एक काल्पनिक चरित्र बताकर जनता को गुमराह किया जिसके कारण राम जन्म भूमि तथा रामसेतु जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थल विवादों के घेरे में आ गये और वे न्यायालयों द्वारा तय किये जाने का विषय बन गये। वहीं दूसरी ओर इससे एकदम विपरीत श्रीलंका की सरकार ने अपने देश में रामायण काल से सम्बन्धित स्थलों का पता लगाकर उनको चिह्नित करने के लिये कई देशों के नामचीन वैज्ञानिकों, इतिहासकारों तथा पुरातत्वविदों का एक दल गठित किया जिसने कई वर्षों के अथक अनुसन्धान के पश्चात दक्षिण अफ्रीका, इण्डोनेशिया, मलेशिया तथा कम्बोडिया तथा कुछ अन्य देशों में विभिन्न स्थलों का गहराई के साथ अध्ययन करने के पश्चात 59 स्थानों को चिह्नित किया है जिनका सीधा सम्बन्ध रामायण में वर्णित विभिन्न घटनाओं से रहा है। यही नहीं श्री लंका की सरकार के अनुसार रेंगला नामक स्थान पर एक गुफा में रावण की ममी रखी हुई है। जिसे युद्धभूमि से नाग जाति के लोग उठा ले गये थे। इस दल ने रामायण का काल 8000 वर्ष ईसा से पूर्व निर्धारित किया है। श्रीलंका के अधिकारियों ने विधिवत यह सूचना दिल्ली में 14 जनवरी 2008 को एक प्रेस कांफ्रेस आयोजित कर दी थी।

अयोध्या और रामसेतु

श्रीराम की जन्म स्थली अयोध्या और श्रीराम द्वारा रामेश्वरम और श्रीलंका की मन्नार खाड़ी के मध्य निर्मित रामसेतु यह दो ऐसे प्रतीक हैं जिनसे रामायण के काल के इतिहास के सम्बन्ध में बहुत कुछ जानकारी जुटाई जा सकती है। अथर्ववेद में अयोध्या का वर्णन अष्टचक्रनव द्वार या देवपुरी के रूप में किया गया है। जिसको प्रथम आर्य राजा वैवस्वत मनु ने अपनी राजधानी के रूप में विकसित किया। उस समय इसकी सीमा पूर्व में आज़मगढ़ तथा पश्चिम में लखनऊ तक फैली हुई थी और दोनों दिशाओं में दो भव्य द्वार थे जिन पर द्वारपाल तैनात रहते थे। यह एक सुव्यवस्थित नगर

था जिसमें चारों दिशाओं में जाने के लिए चार मुख्य मार्ग थे। जिनके किनारे राज महल और राज प्रसाद बने थे। नगर में आयताकार भवन और अति सुन्दर बाग़ बगीचे थे। फैज़ाबाद के गज़ेटियर में अयोध्या के इतिहास को वैदिक काल से जोड़ा गया है।

रामसेतु के सम्बन्ध में दूरसंवेदी अध्ययन केन्द्र के वैज्ञानिक रामास्वामी का मत है कि कथित रामसेतु लगभग 3,500 वर्ष पुराना है। क्योंकि उसकी कार्बन डेटिंग रामायण के काल से मेल नहीं खाती है। वहीं भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के पूर्व निदेशक डा. बद्री नारायण का मत है कि रामसेतु प्राकृतिक रचना नहीं है। उनका तर्क है कि बिना किसी मानव प्रयास के एक साथ इतनी चट्टानों का एक स्थान पर एकत्रित होकर एक सेतु का रूप ले लेना असम्भव है क्योंकि उनमें से कुछ चट्टाने इतनी हलकी हैं कि वे पानी पर तैर सकती हैं। कहा यह भी जाता है कि 15 वीं शताब्दी तक यह रामसेतु पूर्ण रूप से सुरक्षित था इस पर पैदल चलकर यात्री लंका जाया करते थे पर 1480 में इसका कुछ भाग समुद्र में भयंकर सुनामी आ जाने के कारण नष्ट हो गया और इस पर से लंका जाने का मार्ग सदा के लिये समाप्त हो गया।

ब्रिटिश शासन काल में मद्रास प्रेसीडेन्सी के तत्कालीन गवर्नर लार्ड पेन्टलेन (1912–19) ने रामसेतु की ऐतिहासिक एवं पुरातांत्विक महत्व को समझा और 1914 में भारत के तत्कालीन वाईसराय लार्ड हार्डिंग को एक पत्र लिखकर रामसेतु को एक राष्ट्रीय स्मारक घोषित करने की पुरज़ोर सिफारिश की ताकि इस बहुमूल्य राष्ट्रीय धरोहर को भावी पीढ़ियों के लिये सुरक्षित और संरक्षित रखा जा सके। पूर्व केन्द्रीय मंत्री डॉ० सुब्रामणियम स्वामी ने एक पत्र चेन्नई के महापौर के कार्यालय से खोज निकाला है। 1803 में प्रकाशित एक रिपोर्ट में लिखा है कि रामसेतु मदुरे जिले के रामनाडू ताल्लुका में स्थित है जो मदुरे से 110 मील तथा रामनाडू से 48 मील की दूरी पर स्थित है। यह सेतु निश्चित रूप से भारत और सीलोन (श्रीलंका) को 1480 तक जोड़ता था। इसकी लम्बाई 30 मील और चौड़ाई एक मील है जिस पर पैदल आवागमन होता था। रिपोर्ट में लिखा है कि नल ने इसका निर्माण किया था और इसी से श्रीराम ने अपनी सेना के साथ लंका पर आक्रमण किया था।

लखनऊ नगर की स्थापना

श्रीराम जब लंका पर विजय प्राप्त करके वापस अयोध्या लौटे तो नगर में उनका भव्य स्वागत किया गया और नागरिकों द्वारा दीवाली मनाई गयी। उनका फिर पूरे राज सम्मान के साथ राज्याभिषेक करके उनको विधिवत अयोध्या नरेश घोषित किया गया पर एक धोबी के कहने पर उन्होंने अपनी गर्भवती पत्नी सीता का परित्याग कर दिया और अपने अनुज भ्राता वीरवर लक्ष्मण को आदेश दिया कि वे सीता को बिठूर में स्थित महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में छोड़ आयें। जब वीरवर लक्ष्मण अयोध्या से सीता जी को लेकर बिठूर जा रहे थे तो वे कुछ क्षण के लिये लखनऊ में ठहरे थे। उनको यह स्थान बड़ा रमणीक और शान्तिमय लगा क्योंकि उस समय यह सारा क्षेत्र मूसाबाग से लेकर कुकरैल तक घने वन से आच्छादित था और गोमती के दक्षिणी तट पर एक ऊंचा पठार नुमा टीला था। वीरवर लक्ष्मण सीता जी को बिठूर में महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में छोड़ने के पश्चात बहुत अधिक उदास हो गये और उन्होंने अयोध्या वापस लौटने के स्थान पर कुछ पल लखनऊ में व्यतीत करना अधिक उचित समझा। उन्होंने उसी पठार नुमा भूमि पर शेषनाग के मन्दिर का निर्माण कराया तथा एक दुर्ग का निर्माण कराया। इस प्रकार वीरवर लक्ष्मण ने लगभग 8000 वर्ष ईसा से पूर्व लखनऊ नगर की लक्ष्मणपुरी के रूप में आधारशिला रखी।

वीरवर लक्ष्मण के अयोध्या वापस लौटने पर श्रीराम ने लखनऊ के चौमुखी विकास का भार लक्ष्मण को सौंपा जिन्होंने फिर संसार के प्रथम वास्तुविद विश्वकर्मा के निर्देशन में यहां अनेक मन्दिरों, भवनों तथा प्रसादों का निर्माण कराया और इस प्रकार लखनऊ नगर एक प्रमुख आर्य पीठ के रूप में अस्तित्व में आया। उस काल खण्ड में गोमती एक विशाल नदी थी और इसका पाट भी काफी चौड़ा था क्योंकि यह सारा क्षेत्र लखनऊ से उत्तरी दिशा में नैनीताल तक घने वनों से घिरा हुआ था। जिसके कारण भीषण वर्षा होती थी और गोमती नदी में पूरे वर्ष काफी मात्रा में निर्मल और स्वच्छ पानी रहता था। उसकी वर्तमान समय जैसी दुर्दशा नहीं थी। लखनऊ के उत्तरी

किनारे पर गोमती नदी तो दक्षिणी किनारे पर सई नदी के कारण यहां की भूमि काफी उपजाऊ थी और प्रचुर मात्रा में अनाज तथा शाक–सब्ज़ी की पैदावार होती थी। गोमती के तटों पर ऋषियों तथा मुनियों के आश्रम थे जो तपस्या और साधना में तल्लीन रहते थे और अपने शिष्यों को शिक्षा–दिक्षा देते थे। लखनऊ के गज़ेटियर में भी इस बात का उल्लेख है कि इस नगर की स्थापना वीरवर लक्ष्मण ने की जिसके प्रतीक स्वरूप लक्ष्मण टीला आज भी विद्यमान है।

श्रीराम के आदेश पर वीरवर लक्ष्मण युद्ध भूमि में घायल पड़े रावण से राजनीति का पाठ पढ़ने गये थे। रावण शिव का भक्त था। वीरवर लक्ष्मण ने अपने राजनीतिक गुरू को समर्पित कोणेश्वर महादेव का मन्दिर चौक के निकट हरदोई जाने वाले मार्ग के कोने पर निर्माण कराया। शिव श्रीराम के भी आराध्य थे इस कारण लखनऊ में अनेक प्राचीन शिव मन्दिर हैं।

लखनऊ की गोमती नदी गंगा नदी से प्राचीन है इसे आदि गंगा भी कहा जाता है। राजा भगीरथ से पूर्व लखनऊ के पश्चिम में हरिणाकश्यप का राज्य था। वह एक दुष्ट और नास्तिक शासक था। अगर कोई ईश्वर का नाम लेता तो उसको मौत के घाट उतार दिया जाता था। जनता उसके अत्याचारों से त्रस्त थी। उसको अमरत्व का वरदान प्राप्त था। वह हरिद्रोही कहलाता था जो बाद में बिगड़ कर हरदोई कहा जाने लगा। जनता को उसके अत्याचारों से मुक्त कराने के लिये नरसिंह अवतार को खम्बा फाड़ कर प्रकट होना पड़ा। उन्होंने हरिणाकश्यप को अपनी जांघों पर लिटा कर अपने हाथों के बड़े–बड़े नखों से उसका पेट चीर कर उसको मौत के घाट उतारा फिर कुड़िया घाट पर आकर अपने नखों पर लगा लहू धोया और स्नान किया। कुछ विद्वानों का तर्क है कि बाद में नख लहू ही बिगड़ कर लखनऊ हो गया।

प्रायः पाश्चात्य इतिहासकारों की कृतियों को आधार मान कर यह कहा जाता है कि हमारी सभ्यता का इतिहास लगभग 5000 वर्ष प्राचीन है। या फिर दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि जब से कलयुग आरम्भ हुआ।

जिसकी गणना 3,102 वर्ष ईसा से पूर्व आंकी गई है। इस समय कलयुग का अन्तिम चरण चल रहा है। अब यदि हम इसको आधार मान कर गणना करें तो लखनऊ नगर की स्थापना को लगभग, 8000 वर्ष ईसा से पूर्व के आस–पास आंका जा सकता है।

साईंस पत्रिका के आन लाईन संस्करण में 4 अप्रैल 2008 को प्रकाशित एक शोध पत्र के अनुसार अमरीका के ऑरगन विश्वविद्यालय के पुरातत्वविद् प्रोफेसर डेनिस ने ओरेगन राज्य में एक अति प्राचीन गुफा ढूंढ निकाली है। जिसमें मिले मानव मल के जीवाश्म के डी.एन.ए. विश्लेषण से इस बात की पुष्टि हुई है कि उसकी आयु 14,000 वर्ष पुरानी है जो अब तक की ज्ञात क्लोरिस संस्कृति से भी 1000 वर्ष अधिक प्राचीन बैठता है। वे जीवाश्म साईबेरिया और पूर्वी एशिया में रहने वाले मानवों के जीवाश्मों के समान हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि 14,000 वर्ष पूर्व मानव उत्तरी अमेरिका में अलास्का और साईबेरिया के मध्य भू–सेतु द्वारा पहुंचा जो बाद में भौगोलिक परिवर्तन के कारण नष्ट हो गया जैसे की श्रीराम रामसेतु द्वारा लंका गये थे।

हमारी सभ्यता का इतिहास अमरीका की सभ्यता के इतिहास की तुलना में कहीं अधिक प्राचीन है। लखनऊ में और उसके आस–पास के क्षेत्रों में अनेक टीले हैं। जिनके भीतर इस नगर का प्राचीन इतिहास दबा पड़ा है पर उसको आधुनिक तकनीक का उपयोग करके खोज निकालने की कभी कोई साकारात्मक पहल नहीं हुई।

लखनऊ एक प्रकार से अयोध्या का उपनगर था। जिसका प्रशासन का दायित्व वीरवर लक्ष्मण को सौंपा गया था जिनके पुत्र चन्द्रकेतु द्वारा निर्मित आज भी चन्द्रिका देवी का मन्दिर विद्यमान है।

श्रीराम की म त्यु के पश्चात उनके पुत्र लव और कुश ने राजगद्दी संभाली। जिन्होंने अपने राज्य का और अधिक विस्तार किया। ईरान तब आर्यान हो चुका था। हुकरात के तट पर एक सूर्य मन्दिर में मिली राजाओं की वंशावली में श्रीराम का नाम अंकित है। यहां के धर्म ग्रन्थ ज़िन्द वस्ता और

हमारे धर्म ग्रन्थ ऋग्वेद में बहुत अधिक समानता है। जार्डन का नगर ''रामल्ला'' भी हमारी संस्कृति का प्रतीक है।

महाराजा कुश बड़े पराक्रमी राजा थे। उन्होंने हिट्टियों से मिश्र–अफ्रिका के देश, सोमालिया तथा सूडान छीन कर अपना साम्राज्य स्थापित किया। आर्य ग्रन्थों में कुशदीप का वर्णन मिलता है। यह साम्राज्य ईरान, इराक तथा अरब तक फैला था। जिसका केन्द्र सूडान था जो वास्तव में शिवदान का बिगड़ा हुआ स्वरूप है। महाराजा लव ने लाओस (कम्बोडिया) को अपने अधिकार में लिया था जो वास्तव में लवदेश है। आर्य राजाओं में सदैव विश्वविजय करने की इच्छाशक्ति रही। जिसके कारण उन्होंने भारत से लेकर ऐशिया माईनर तथा नील नदी तक समय–समय पर अपने साम्राज्य की सीमाओं का विस्तार किया। ईरान के शासक रज़ा शाह पहलवी अपने को आर्य मेहर कहते थे और आर्यो का वंशज मानते थे। ईरान में, आर्यो का अति प्राचीन त्योहार नवरोज़ आज भी प्रति वर्ष 21 मार्च को बड़े उल्लास के साथ मनाया जाता है जो प्राचीन आर्य संस्कृति का प्रतीक है। जर्मनी का शासक हिटलर भी आर्य संस्कृति का स्वागत तथा गुणगान करता था और अपने को आर्यवंशी कहता था। आर्यो का प्रतीक स्वास्तिक चिह्न उसके शासन की मुख्य पहचान थी। महाराजा लव ने ही रवी नदी के तट पर लाहौर नगर को बसाया था जहां उस काल खण्ड में काफी बड़ी संख्या में ब्राह्मणों की आबादी थी जिसका उल्लेख अंग्रेज़ों के शासन काल में 1908 में प्रकाशित ''द इम्पीरियल गज़ेटियर आफ इण्डिया'' में किया गया है। लखनऊ में रिवर बैंक कालोनी के निकट स्थित सूर्यकुण्ड और मन्दिर इन्हीं सूर्यवंशी

सूर्यवंशी राजाओं का प्रतीक सूर्य कुण्ड

मूक गवाह है। लखनऊ का प्रसिद्ध शमसी परिवार अपने को सूर्यवंशी मानता है।

जर्मन पुरातत्वविद् क्लाज़ शूमिड ने 2008 में टर्की नगर के दक्षिण पूर्व में स्थित अति प्राचीन बस्ती उर्फ़ी से लगभग 6 मील दूरी पर तथा पाषाण काल से भी पुराने एक मन्दिर को खोज निकाला है। उसने मन्दिर के पत्थरों पर की गयी कारीगरी को लगभग 11,000 वर्ष पुराना आंका है। अर्थात यह मन्दिर पाषाण काल से 6000 वर्ष पूर्व का है जबकि उस समय पत्थरों को आकार देने और उन पर आकृतियां उकेरने के लिये धातु से निर्मित औज़ार नहीं थे। यह स्थान गोबेकली टेप कहलाता है जहां पिछले एक दशक से क्लाज़ शुमिड शोध कार्य कर रहे हैं। यह साफ दर्शाता है कि 11,000 वर्ष पूर्व भी आर्य संस्कृति पूर्ण रूप से विकसित थी।

लखनऊ और कोशल देश

अयोध्यापति श्रीराम ने अपने राज्य की सीमा का विस्तार दक्षिण में लंका तक कर लिया था। उस समय राजवंशों में राजसिंहासन का उत्तराधिकारी ज्येष्ठ पुत्र होता था। श्रीराम के दोनों पुत्र लव और कुश जुड़वां थे अतः श्रीराम की म त्यु के पश्चात राज्य को लव और कुश में बराबर से बांट दिया गया। कुछ विद्वानों के अनुसार श्रावस्ती महाराजा लव की राजधानी बनी। वहीं कुछ विद्वान साकेत को महाराजा लव की राजधानी मानते हैं। महाराजा कुश की राजधानी दक्षिण में कुशावती को बनाया गया। जिसे अब शोधकर्ता बुन्देलखण्ड के रामनगर को मानते हैं। यह दोनों भ्राता बहुत अधिक शौर्यवान एवं पराक्रमी शासक सिद्ध हुए। इन दोनों ने महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में रहते हुए अपनी बाल्यावस्था में ही अपने अदम्य साहस और वीरता का परिचय दे दिया था जब उन्होंने श्रीराम द्वारा अश्वमेघ यज्ञ कराने के पश्चात छोड़े गये घोड़े को पकड़ कर उनकी राजसत्ता को खुली चुनौती दी थी। लखनऊ महाराजा लव के उस समय अधिकार में था, उन्होंने यहां शीतला देवी मंदिर स्थापित किया।

इस सूर्यवंशी राजाओं की कड़ी में श्रीराम की 18वीं पीढ़ी में राजा कौशल्य अयोध्या नरेश बने जिनके नाम से अवध का क्षेत्र कोशल देश के

कहलाने लगा। यह क्षेत्र काफी सम्पन्न और सम द्ध था। बाद में इस देश का विघटन उत्तरी और दक्षिणी कोशल में हो गया। दक्षिण कोशल की राजधानी श्रावस्ती बनी। युद्धों के कारण कोशल देश की सीमायें विभिन्न काल खण्डों में घटती और बढ़ती रही। महाराजा कुश की राजधानी कुशावती को इतिहासकार गोण्डा बलरामपुर से कुछ दूर 'सहेट' को मानते हैं। लखनऊ की पूर्वी सीमा पर घना वन था जिसमें बहुत बड़ी संख्या में जंगली सुअर थे। यह क्षेत्र वारह वन कहलाता था जो बाद में बिगड़ कर बाराबंकी कहलाने लगा। इस काल खण्ड में लखनऊ नगर कोशल देश के अधीन रहा और उसके राजा यहां शासन करते रहे।

महाभारत काल

लखनऊ नगर और उसके आसपास के क्षेत्रों का इतिहास समझने के लिये उस समय की कुछ प्रमुख घटनाओं तथा स्थलों से जुड़ी लोककथाओं का अध्ययन बहुत आवश्यक है। हमारे चार धाम उत्तर में बद्रीनाथ पूर्व में जगन्नाथ, दक्षिण में रामेश्वर तथा पश्चिम में द्वारिका और सात प्रमुख नगर पुरी, अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, उज्जैन और द्वारिका उस काल खण्ड के इतिहास से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं।

आर्य संस्कृति का प्रतीक एक प्राचीन मन्दिर

महाराजा युधि ाष्ठिर के साम्राज्य की राजधाानी मेरठ के निकट हस्तिनापुर थी जबकि श्रीकृष्ण की कर्मभूमि मथुरा के निकट ब ज भूमि थी और उनके साम्राज्य की राजधानी द्वारिका थी। लखनऊ पर एक प्रकार से यदु वंशीय राजाओं का आधिपत्य था। मगध के राजा जरासंध और कालयवन के

आक्रमण के भय से यदुवंशी मथुरा से भाग कर सौराष्ट्र में अरब सागर के तट पर पहुंच गये जहां उन्होंने विश्वकर्मा की सहायता से अपनी सोने की राजधानी द्वारिका का निर्माण कराया। ऐसी मान्यता है कि गुजरात राज्य में गोमती नदी के मुहाने पर बसे हुए इस अति प्राचीन और भव्य नगर का निर्माण श्रीकृष्ण द्वारा 3000 से 5000 वर्ष पूर्व कराया गया जो महाभारत के अनुसार बाद में अरब सागर में समा गया।

विख्यात पुरातत्वविद् प्रोफेसर एस.आर. राव ने समुद्र के भीतर इस द्वारिका को खोज निकालने के लिये 11 बार बड़े पैमाने पर आधुनिक उपकरणों के साथ अभियान दल का नेत त्व किया। उन्होंने 1983 और 1990 के मध्य अपने इस शोधकार्य के आधार पर एक पुस्तक ''दि लास्ट सिटी ऑफ द्वारिका'' 1999 में प्रकाशित की जिसमें उन्होंने समुद्र के भीतर एक विकसित नगर होने की बात का उलेख किया है। उन्होंने अपने शोधकार्य के आधार पर यह निषकर्ष निकाला है कि श्रीकृष्ण की द्वारिका 1706 वर्ष ईसा से पूर्व वजूद में थी क्योंकि जो कांस्य के बर्तन और सिक्के पाये गये उन पर वैदिक काल की संस्कृत अंकित है उनके 3528 वर्ष प्राचीन होने के प्रमाण हैं।

लखनऊ जनपद में अनेक ऐसे स्थल है जिनका सीधा सम्बंध महाभारत काल से है अर्थात जिनका इतिहास 3050 से 3000 वर्ष ईसा से पूर्व का है। नगराम कस्बा वास्तव में राजा नल द्वारा बसाया गया नल ग्राम था जो बिगड़ कर नगराम हो गया। इसी प्रकार निगोहा राजा हानुष के नाम से बसा जो राजा ययाति के पिता थे। दादूपुर का टीला श्रीकृष्ण के अग्रज भ्राता बलराम का प्रतीक है। यद्यपि बाणासुर की राजधानी ईराक में थी पर उसके कई वंशज लखनऊ में रहते थे। लखनऊ में उत्तर पश्चिम में बाणापुर नाम का गांव बसा हुआ है जहां आज भी बाणासुर की पूजा होती है। बाणासुर की पुत्री ऊषा ने अपनी मायावी शक्ति द्वारा अभिमन्यु का अपहरण कर उसको लखनऊ में कारावास में बन्द कर दिया था। जिसको स्वतंत्र कराने के लिये श्रीकृष्ण और अर्जुन को लखनऊ आना पड़ा। लखनऊ का अर्जुनगंज उस घटना का मूक साक्षी है। लखनऊ का नव विकसित क्षेत्र सिन्धुवन कहलाता था। इस

क्षेत्र की देवी का मन्दिर अब सिन्दोहन देवी का मन्दिर कहलाता है जो चौपटियां में स्थित है। लखनऊ के निकट जुग्गोर गांव राजा जनमेजय द्वारा जागदेव जोगी को यज्ञ कराने के उपलक्ष में दान स्वरूप दिया गया था। वीरवर लक्ष्मण श्रीराम की सुरक्षा के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित थे। अतः उनको श्रीराम का प्रतिहारी भी कहा जाता है प्रतिहारी क्षत्रिय समाज अपने को वीरवर लक्ष्मण का वंशज मानता है लखनऊ पर काफी समय प्रतिहारी क्षत्रियों का आधिपत्य रहा।

मथुरा से यदुवंशी राजाओं के पलायन के पश्चात लखनऊ नगर मगध साम्राज्य का अंग बन गया जिसकी राजधानी पाटलिपुत्र (पटना) थी। उस समय मगध साम्राज्य बहुत समर्थ और सम्पन्न था तथा नालंदा विश्वविद्यालय होने के कारण एक प्रमुख शिक्षा का केन्द्र था जहां अनेक देशों के छात्र शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से आते थे जिसको 1193 में बख्तियार खिलजी ने ध्वस्त कर दिया। लखनऊ में चन्द्रिका देवी मन्दिर के निकट माण्डूक्य ऋषि का आश्रम था तथा कुड़िया घाट के निकट कौण्डल्य ऋषि का आश्रम था जो कोनेश्वर महादेव के भक्त थे और जिन्होंने दक्षिण पूर्व द्वीप समूहों पर अपना आधिपत्य स्थापित किया और वहां के निवासियों को सुसंस्कृत किया। उन्होंने कम्बोडिया पर अपना राज स्थापित किया। लखनऊ के निकट नैमिषारण्य को 38 हजार ऋषियों की तपोस्थली कहा गया है नगर में अनेक प्राचीन मन्दिर थे जिनमें पूजा अर्चना करने की व्यवस्था का भार ब्राह्मणों के पास था जिसके कारण लखनऊ नगर में ब्राह्मणों की अच्छी आबादी थी और नगर ऋषियों की तपोभूमि के नाम से जाना जाता था।

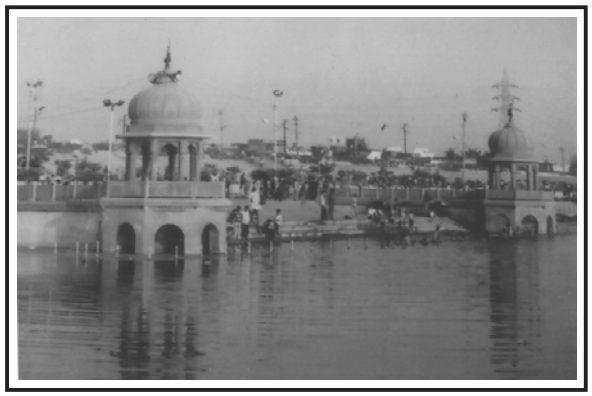

कुड़िया घाट जहां कभी कौण्डिल्य ऋषि का आश्रम था।

लखनऊ पर बौद्ध तथा जैन धर्म का प्रभाव

जिस समय भगवान गौतम बुद्ध और तीर्थांकर महावीर इस क्षेत्र में अपने–अपने धर्म का प्रचार और प्रसार करने में संलग्न थे उसे समय मगध पर नन्दवंशीय राजाओं का शासन था। यूनानी इतिहासकारों के अनुसार गौतम बुद्ध का जन्म 567 वर्ष ईसा से पूर्व तथा म त्यु 80 वर्ष पश्चात 487 वर्ष ईसा से पूर्व आंकी गई है जो सही नहीं है। विन्सट स्मिथ ने अपनी पुस्तक "The Oxford Students History of India" में लिखा है कि यद्यपि गौतम बुद्ध की म त्यु की तिथि निश्चित नहीं है पर इन तिथियों में केवल 4–5 वर्ष का अन्तर हो सकता है।

विष्णु पुराण (भाग 4, अध्याय 22) के अनुसार महाभारत के युद्ध में अभिमन्यु द्वारा व हदबल का वध किये जाने के पश्चात व हदक्षण राजसिंहासन पर बैठा जिसके 23 वें वंशज शुद्धोधन थे। जिनके पुत्र राजकुमार सिद्धार्थ संसार को त्याग कर गौतम बुद्ध बन गये। वास्तव में गौतम उनका गोत्र था। इस वंश के राजाओं ने 1504 वर्ष राज्य किया। सिद्धार्थ महारानी माया और महाराजा शुद्धोधन के सुपुत्र थे जिन्होंने 19 वर्ष की आयु में राजपाट छोड़ दिया और गया नगर में एक पीपल के पेड़ के नीचे घोर तपस्या की और वहीं उनको ज्ञान प्राप्त हुआ। उनके स्थान पर उनका पुत्र राहुल राज सिंहासन पर बैठा। बौद्ध–ग्रन्थों के अनुसार महारानी महादेवी और महाराजा बिन्दुसार को उनके माता–पिता माना गया है।

इस काल खण्ड में लखनऊ में अनेक बौद्धमठों तथा जैन मन्दिरों का निर्माण हुआ। नगर में काफी संख्या में इन दोनों धर्मो के अनुयायी बसे। प्राचीन जैन मन्दिर आज भी चारबाग, डालीगंज और चौक मे स्थित है जो उस काल के प्रतीक हैं। गड़ेशगंज में बौद्ध मठ है। उस काल के अनेक मन्दिर तथा मठ विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा ध्वस्त कर दिये गये।

सिकन्दर का आक्रमण

सिकन्दर का जन्म 356 वर्ष ईसा से पूर्व मेसीडोनिया (ग्रीस) में हुआ था। वह राजा फिलिप द्वितीय और ऐफीरोट की राजकुमारी ओलंम्पियस का

पुत्र था। उसकी 14 वर्ष की आयु में यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू की देख–रेख में शिक्षा हुई। अरस्तू ने उसे अदम्य साहसी युवक बनाया। जिसके कारण वह राजसिंहासन पर बैठने के पश्चात 345 वर्ष ईसा से पूर्व विश्व विजय के अभियान पर निकल पड़ा और पूर्वी एशिया के अनेक देशों पर अपनी विजय पताका फहराता हुआ 327 वर्ष ईसा से पूर्व भारत की सीमा पर आ पंहुचा। जब सिकन्दर की सेना ने सिन्धु नदी को पार किया तो उस समय भारत के उस क्षेत्र में तीन राज्य थे।

झेलम नदी के चारों ओर राजा अम्भि का शासन था। चिनाव नदी से लगे हुए क्षेत्र पर पोरस का अधिकार था और कश्मीर का शासक अभिसार था। जब सिकन्दर ने पोरस पर आक्रमण किया तो झेलम के शासक अग्नि तथा कश्मीर के शासक अभिसार ने आपसी कटुता तथा मतभेदों के कारण पोरस का साथ नहीं दिया और उसको पराजय का मुंह देखना पड़ा यद्यपि इस आक्रमण के पश्चात कुछ अव्यावहारिक कारणों से सिकन्दर को वापस लौटने को बाध्य होना पड़ा पर उसकी सेना के अनेक यूनानी सैनिकों ने कुछ क्षेत्रों पर अपना आधिपत्य जमा लिया जिन्होंने कालान्तर में न केवल राज किया अपितु भारत में यूनानी चिकित्सा पद्धति आरम्भ की और भारत में सिक्के ढालने की तकनीक को विकसित किया। अनेक यूनानी मूल के चिकित्सक भारत में इस्लाम धर्म आने के पश्चात हकीम बन गये। इस प्रकार लखनऊ में हकीमों की एक पूरी बस्ती झंवाई टोला के नाम से आबाद हुई। लखनऊ के हकीमों का प्रसिद्ध अज़ीजी खानदान कश्मीर से आकर लखनऊ में बसा। हकीम अब्दुल अज़ीज़ के नाम से नगर में अब्दुल अज़ीज़ रोड आज भी मौजूद है।

सिकन्दर के आक्रमण के समय लखनऊ मगध के आधीन था। जिसका शासक नन्द था पर उसमें और उसके मंत्री चाण्क्य में कुछ मतभेद उत्पन्न हो गये। चाणक्य ने अपनी कूटनीति का प्रयोग कर 324 वर्ष ईसा से पूर्व एक पिछड़ी जाति के चन्द्रगुप्त मौर्य को मगध का सम्राट बना दिया जिसने अफ़गानिस्तान से लेकर मैसूर तक अपना साम्राज्य स्थापित किया और लखनऊ उसका अंग बन गया इसी मौर्य वंश में अशोक जैसा महान शासक

हुआ जिसने उड़ीसा से लेकर कश्मीर तक अपने राज्य का विस्तार किया पर कलिंग युद्ध की भीषण त्रासिदी को देखकर उसका हृदय द्रवित हो गया और उसने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। जिसके कारण सारे देश में बौद्ध धर्म का बहुत ही तीव्र गति के साथ प्रचार और प्रसार हुआ। इसी के पश्चात मौर्यवंश का पतन आरम्भ हो गया क्योंकि सैनिकों में युद्ध लड़ने का कौशल और शक्ति का अभाव हो गया। वे अहिंसा के पुजारी हो गये। अन्तिम मौर्य शासक व हदथ की उसके सेनापति गुप्तमित्र शुंग ने हाथी से कुचलवा कर म त्यु करा दी और अपने को राजा घोषित कर दिया। इस शुंग वंश ने 185 वर्ष ईसा से पूर्व से लेकर 73 वर्ष ईसा से पूर्व तक शासन किया। इस दौरान यूनानी शासक डेमेट्रियस ने आक्रमण कर दिया जो लूट–पाट करता हुआ पटना तक गया अन्तिम शुंग सम्राट देवभूति था। उसके मंत्री वसुदेव ने उसकी हत्या कर दी और स्वयं शासक बन गया। लखनऊ कुछ समय तक उसके आधीन रहा। लखनऊ ने इस अन्तराल में काफी युद्धों की विभीषिका को झेला। मगध का विशाल साम्राज्य जो कभी अफगानिस्तान तक फैला हुआ था बिखर कर छोटे–छोटे राज्यों में बंट गया। आपसी वैमनस्य, कटुता, मतभेदों तथा राजमहलों के षडयंत्रों ने शासन और प्रशासन को भीतर ही भीतर एकदम खोखला कर दिया। मौर्य वंश के शासन काल में दक्षिण कोशल की राजधानी कौशाम्बी थी।

इस राजनैतिक अस्थिरता का पूर्ण लाभ लेते हुए सिकन्दर तथा उसके सेनापति सेल्युकस के आक्रमणों के समय जिन यूनानियों ने अफ़गानिस्तान और उत्तरी भारत के कुछ क्षेत्रों पर अपना अधिकार जमा लिया था 2 शताब्दी ईसा से पूर्व में मगध पर भी अपना अभियान चलाकर यूनानी सैनिकों ने साकेत से लेकर पाटलिपुत्र के सारे क्षेत्र पर अपना शासन जमा लिया। इस प्रकार लखनऊ इन यूनानी राजवंशों के आधीन हो गया।

भारत में इन यूनानी राजवंशों के शासन ने विदेशी शक्तियों के आक्रमण का मार्ग प्रशस्त कर दिया। विदेशी हूंण, शक तथा पहलवाल जातियों का शासन एक सीमित क्षेत्र पर रहा। जबकि मध्य एशिया से आने वाली कुषाण जाति ने पहली शताब्दी में एक बड़ा साम्राज्य स्थापित किया। इस वंश के प्रतापी सम्राट कनिष्क ने कश्मीर से पटना तक अपने राज्य की सीमा का

विस्तार कर लिया था।

इन आक्रमणों और युद्धों के कारण लखनऊ की, अति प्राचीन आर्य संस्कृति के अनेक स्मारक और प्रतीक चिह्न या तो नष्ट हो गये या ध्वस्त कर दिये गये। चौथी और छठी शताब्दी के मध्य लखनऊ गुप्तवंश राजाओं के आधीन रहा जिनमें समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त जैसे प्रतापी शासक हुए। लखनऊ पर फिर कन्नौज के महान शासक और विजेता हर्शवर्धन का 606 ई. में अधिकार हो गया।

भारत में मुसलमानों का प्रवेश

हिन्दुओं द्वारा समुद्र की यात्रा करना क्यों, कब और किन परिस्थितियों के कारण वर्जित किया गया इसका स्पष्ट प्रमाण नहीं है। केरल के हिन्दू शासक चेरामन पेरूमल ने 627 ई. में मक्का जाने के लिये समुद्री यात्र की और वहां जाकर वह पैग़म्बर मोहम्मद से मिला। अपने देश वापस लौटने पर हिन्दू समाज ने उसको अपने धर्म से बहिष्कृत कर दिया और उसको विवश होकर इस्लाम धर्म स्वीकार करके मुसलमान बनना पड़ा। उसने 629 ई. में कोनुन्धर नामक स्थान पर भारत में प्रथम मस्जिद का निर्माण कराया जो केरल राज्य में आज भी स्थित है। उसने अरब के सौदागरों को अपने राज्य में पूर्ण संरक्षण प्रदान किया और इस प्रकार केरल में 7वीं शताब्दी में मोपला समुदाय का बसना आरम्भ हुआ। मुहम्मद बिन कासिम प्रथम मुस्लिम शासक था जिसने 712 ई. में सिन्ध पर आक्रमण कर दिया और वहां के हिन्दू शासक दाहिर को पराजय का मुंह देखना पड़ा। उसकी किसी स्थानीय हिन्दू राजा ने सहायता नहीं की। सब अपने–अपने रंग में मस्त रहे।

740 ई. में कश्मीर के महान शासक ललितादित्य ने कन्नौज पर आक्रमण कर दिया और वहां के राजा यशोवर्मन को परास्त कर उसको अपने साम्राज्य का अंग बना लिया इस प्रकार लखनऊ पर कश्मीर के शासकों का अधिकार हो गया। लखनऊ, बाराबंकी, उन्नाव तथा हरदोई जनपदों पर बंगाल के पालवंश के नरेशों का भी अधिकार रहा। इनमें विग्रहपाल देव और विनायकपाल देव प्रमुख थे। 8 वीं तथा 12 वीं शताब्दी के मध्य लखनऊ

कन्नौज के गुर्जर तथा प्रतिहारी वंश के राजाओं के आधीन रहा।

महमूद गज़नी ने 1000 ई. से 1025 ई. के मध्य 11 आक्रमण किये और जमकर लूट–पाट की तथा प्राचीन मन्दिरों और स्मारकों को ध्वस्त किया। अनगिनत अबोध व्यक्तियों की निर्मम हत्याएँ की गई। उसने मथुरा तथा कन्नौज तक अपना धावा बोला। वह प्रथम सुल्तान था जो गंगा जमुना के दोआबे तक आया पर लखनऊ में नहीं प्रवेश कर सका। अवध के क्षेत्र में प्रवेश करने में उसका भतीजा सालार मसूद गाज़ी 1030 ई. में सफल हुआ और इस प्रकार 11 वीं शताब्दी में लखनऊ का इस्लाम धर्म से परिचय हुआ सालार मसूद गाजी लखनऊ से लूटमार और निर्मम हत्याऐं करता हुआ बहराइच तक गया जहां राजा सुहेलदेव ने युद्ध में उसको मौत के घाट उतार दिया। सालार मसूद गाजी को बहराइच में दफ़्न कर दिया गया जिस नगर का एक लम्बा पौराणिक इतिहास रहा है जो स ष्टि के रचयिता ब्रह्मा जी की राजधानी थी और जिसका नाम ब्रह्मराइच था जो बिगड़कर बहराइच हो गया। सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि सालार मसूद गाज़ी जिसके हाथ निर्दोष व्यकितयों के रक्त से रंजित थे कालान्तर में एक सूफ़ी संत प्रसिद्ध हो गया और उसकी दरगाह पर उर्स होने लगा तथा प्रतिवर्ष एक बड़ा मेला लगता है और बहुत बड़ी संख्या में ज़ाइरीन उसकी मज़ार पर चादर चढ़ाते हैं। यह स्वयं दर्शाता है कि हम अपने वास्तविक इतिहास के प्रति कितने जागरूक हैं।

सल्तनत काल

मोहम्मद ग़ौरी ने भारत पर कई आक्रमण किये। प्रथम आक्रमण में उसको पराजय का मुंह देखना पड़ा। उसने पुनः 1192 ई. में दूसरा आक्रमण कर दिया जिसमें तराइन के मैदान में उसके और दिल्ली के अन्तिम हिन्दू सम्राट प थ्वीराज चौहान के मध्य भयंकर युद्ध हुआ जिसमें प थ्वीराज चौहान की पराजय हुई और उसकी हत्या कर दी गयी क्योंकि कन्नौज के राजा जयचन्द ने जिसकी पुत्री संयुक्ता को वह अगवा कर ले गया था आपसी कटुता के कारण उसका साथ नहीं दिया। प थ्वीराज चौहान के शव को काबुल ले जाकर वहां से कुछ मील दूर एक सुनसान स्थान पर दफ़्न कर दिया गया।

मोहम्मद ग़ौरी का विचार महमूद गज़नवी की तरह लूट–पाट या निर्मम हत्याएं करना नहीं था अपितु वह अपने राज्य की सीमाओं का विस्तार करना तथा राज सत्ता का सुख भोगना चाहता था अतः काबुल जाते समय उसने विजय प्राप्त किये हुए क्षेत्र पर नियंत्रण के लिये अपने प्रिय और विश्वासपात्र गुलाम कुतुबउद्दीन ऐबक को नियुक्त किया जिसने 1193 ई. में प थ्वीराज चौहान के पिथौरा के किले पर कब्ज़ा करके अपने को दिल्ली का प्रथम मुस्लिम सुल्तान घोषित कर दिया। इस प्रकार भारत में गुलाम वंश के शासकों की नींव पड़ी। गुलाम वंश के तीसरे सुल्तान इल्तुतमिश ने दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया और अपने राज्य की सीमा का विस्तार किया तथा कुतुबमीनार का निर्माण पूर्ण किया। मोहम्मद ग़ौरी ने 1194 ई. में कन्नौज पर आक्रमण कर दिया और वहां के राजा जयचन्द को परास्त कर उसको भी अपने अधिकार में ले लिया।

इन मुस्लिम सुल्तानों की श्रं खला में गुलाम वंश के पश्चात खिलजी वंश सत्तारूढ़ हुआ जिसके त तीय शासक अलाउद्दीन खिलजी ने 1303 ई. में फिर से नगर को बसाने के लिये सिरी नामक स्थान पर किले की आध ाारशिला रखी। उसके पश्चात तुगलक और लोदी वंश के शासक हुए। ग़यासुद्दीन तुग़लक अपनी राजधानी दिल्ली से तुग़लकाबाद ले गया। लोदी वंश का अन्तिम सुलतान इब्राहीम लोदी था।

लखनऊ अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण सदैव दिल्ली के इन सुल्तानों के लिये आर्कषण का केन्द्र रहा। मोहम्मद गौरी की कन्नौज पर विजय के पश्चात अवध दिल्ली के सुल्तानों के आधीन हो गया था। इसी काल में अफ़गानिस्तान की विभिन्न कबायली जातियों के सरदारों का उत्तरी भारत के विभिन्न क्षेत्रों पर अधिकार हो गया। लखनऊ में भी काफ़ी बड़ी संख्या में यह जातियां बसी। अमौसी के निकट बिजनौर गाँव शेखजादों तथा लखनऊ की तहसील मलिहाबाद पठानों का गढ़ बनीं। दोनों में अपना–अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिये निरन्तर युद्ध होते रहते थे। बाख़्तियार खिलजी बिहार तक गया जहाँ उसने प्राचीन नालन्दा विश्वविद्यालय को ध्वस्त किया। लखनऊ अपनी उपजाऊ भूमि के कारण एक महत्वपूर्ण केन्द्र था और दिल्ली से बंगाल

जाने वाले व्यापारिक मार्ग पर स्थित होने के कारण अन्य क्षेत्रों मे खद्यान की आपूर्ति यहीं से की जाती थी।

इल्तुतमिश इत्थरी जाति का तुर्क था। उसने अपने पुत्र नसीरउद्दीन महमूद को अवध का सूबेदार नियुक्त किया था। उस समय बंगाल की राजधानी मालवा थी। दूर होने के कारण वहां के सूबेदार विद्रोह करते रहते थे। जिन पर नियंत्रण करने के लिये सेनाएं दिल्ली से बंगाल जाते समय लखनऊ में पड़ाव डाल कर रसद पानी लेकर आगे बढ़ती थी।

मोहम्मद तुग़लक दिल्ली का प्रथम सुल्तान था जो सालार मसूद गाज़ी की दरगाह की तिजारत करने लखनऊ से होकर बहराइच गया था। उसने एक पिछड़ी जाति के हिन्दू कृष्ण नारायण इन्द्री को अवध का सूबेदार नियुक्त किया था। 1328 ई. और 1334 ई. के मध्य भयंकर आकाल पड़ा। उसने सैनिकों को लूट–पाट का आदेश दिया। सैनिकों ने कन्नौज, लखनऊ, रायबरेली तथा आस पास के जनपदों में जमकर लूट–पाट की और जो मिला उसको मौत के घाट उतार दिया। इतिहासकार इब्ने बतूता के अनुसार लखनऊ और उसके आस–पास का क्षेत्र एकदम वीरान हो गया। मुहम्मद तुग़लक की 20 मार्च 1351 ई. को म त्यु हो गयी।

फिरोज़ शाह तुगलक 1353 ई. में लखनऊ होता हुआ बहराइच गया। 21 सितम्बर 1388 ई. को उसकी म त्यु हो गयी। 23 मार्च 1394 ई. को नसीरउद्दीन महमूद दिल्ली का सुल्तान बना पर शासन पर उसकी पकड़ ढीली पड़ गई। तैमूर ने 1398 ई. में दिल्ली पर आक्रमण कर दिया जिस का पूर्ण लाभ उठाते हुए सूबेदार मलिक सरवर ने जौनपुर में स्वतंत्र शर्की राज्य की घोषणा कर दी और अवध को अपने अधिकार क्षेत्र में ले लिया। इस शर्की वंश में कई प्रतापी शासक हुए जो दिल्ली के सुल्तानों से निरन्तर टक्कर लेते रहे। इस शर्की वंश के शासक महमूद शाह ने 1440 ई. में काकोरी के बैस राजा को परास्त करने के लिये जौनपुर से सेना भेजी थी जिसने लखनऊ में जमकर लूट–पाट की। बहलोल लोदी ने उसको परास्त कर अवध पर पुनः अधिकार स्थापित किया। उसने अपने पौत्र आज़म हुमायूं को इस क्षेत्र का 1478 ई. में सूबेदार नियुक्त किया। इस क्षेत्र को 1506 ई. में अहमद खां लोदी

ने अपने आधिपत्य में ले लिया पर सिकन्दर लोदी ने उसे हटा कर उसके भाई शूर खां को लखनऊ का सूबेदार बना दिया। सिकन्दर लोदी की 1517 ई. में म त्यु हो गयी जिसके पश्चात उसका पुत्र इब्राहीम लोदी दिल्ली का सुल्तान बना। वह बहुत क्रूर और निर्मम शासक था जिसके कारण उसके खास सिपहसालारों ने उसके विरूद्ध विद्रोह कर दिया। पंजाब के सूबेदार दौलत खां और उसके चाचा आलम खां ने बाबर को आक्रमण करने का निमंत्रण काबुल भेजा। बाबर ने 10 अप्रैल 1526 ई. को पानीपत के युद्ध में इब्राहीम लोदी को म त्यु के घाट उतार दिया और इस प्रकार सल्तनत काल का अन्त हो गया।

इस सल्तनत काल (1206–1526 ई.) में उत्तर भारत में जमकर इस्लाम धर्म का प्रचार हुआ। अनेक हिन्दू भू–स्वामियों ने सत्ता का संरक्षण प्राप्त करने के लिये इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया जिस प्रकार आज कल भू–माफिया और बड़े–बड़े अपराधी राज सत्ता का संरक्षण प्राप्त करने के लिये समय–समय पर माहौल देखकर राजनीतिक दल बदलते रहते हैं। इस काल में अफ़गानिस्तान, ईराक तथा मध्य ऐशिया के अन्य देशों से अनेक जातियां और समुदाय लखनऊ में आकर बसे और नगर में नयी–नयी बस्तियां आबाद हुई।

मुग़ल शासन की स्थापना

भारत में ज़हीरउद्दीन बाबर ने 1526 ई. में मुग़ल शासन की आधाार शिला रखी। वह एक तूरानी मंगोल था जिसका जन्म 1483 ई. में उज़बेकिस्तान की सीमा से सटे एक छोटे से गांव अन्दीजान में हुआ था। वह केवल 12 वर्ष की आयु में अपने कुछ निष्ठावान घुड़सवारों के साथ विजय अभियान पर एक तूफान के समान निकल पड़ा। उसने बहुत शीघ्र एक शक्तिशाली सेना गठित कर ली और अनेक देशों को रौंदता हुआ अफ़गानिस्तान पहुंच गया और वहां अपना शासन स्थापित किया तथा काबुल को अपनी राजधानी बनाया।

बाबर द्वारा दिल्ली पर अपनी विजय पताका फहराने के तुरन्त बाद राजपूतों ने संगठित होकर राणा सांगा के नेत त्व में एक विशाल सेना के साथ बाबर के विरूद्ध मोर्चा खोल दिया। आगरा के निकट 16 मार्च 1527 ई. को

खानवा के मैदान में भीषण युद्ध हुआ पर राजपूत सरदारों में आपसी कटुता और मतभेदों के कारण राणा सांगा को अपने शरीर पर 70 घाव झेलने के बाद भी पराजय का मुंह देखना पड़ा और बाबर की धाक जम गई। बाबर भारत का इस प्रकार प्रथम मुगल सम्राट बना।

बाबर के पुत्र नसीरउद्दीन हुमांयू ने लखनऊ को अ फ़ गान सरदार बब्बन के चंगुल से 1527 ई. में मुक्त कराया। पर अफगान सरदारों ने पुनः संगठित होकर हुमांयू की अनुपस्थिति में मुगल सेना को खदेड़ कर लखनऊ पर अपना कब्जा कर लिया। बाबर ने 1528 ई. में अफ़गान सरदार बब्बन को खदेड़ कर लखनऊ पर कब्ज़ा कर लिया। इस भीषण युद्ध में मुग़लों ने अफ़गानों को बुरी तरह पराजित किया और उनको बंगाल में शरण लेने को विवश किया। बाबर अयोध्या भी गया जहां उसके सेनापति मीर बाकी ने 1528 ई. में वहां के प्राचीन राम मन्दिर को ध्वस्त कर बाबरी मस्जिद का निर्माण कराया जिसे कारसेवकों ने 6 दिसम्बर 1992 को ध्वस्त कर उस स्थान पर एक अस्थायी राम मन्दिर का फिर निर्माण कर दिया जो मामला अब न्यायालय में लम्बित है। बाबर अफ़गानों के विद्रोह को दबाने के लिये बिहार भी गया जहां पटना के निकट घाघरा के मैदान में हुए भीषण युद्ध में बाबर ने अफ़गानों को बंगाल तक खदेड़ दिया जिसके बाद वह आगरा लौट गया।

बाबर की आगरा में 26 दिसम्बर 1530 ई. को म त्यु हो गयी। उसके शव को पहले आगरा में दफ़न किया गया फिर उसको काबुल ले जाकर दफ़न किया गया और अन्तिमबार उसके शव को उज़बेकिस्तान ले जाकर उसके पैत क गाँव अन्दीजान में दफ़न किया गया। उसकी म त्यु के पश्चात उसके पुत्र हुमांयू ने शासन की बागडोर संभाली पर वह योग्य शासक नहीं था। लखनऊ पर वर्चस्व को लेकर हुमांयू और अफ़गान सरदारों के मध्य निरन्तर युद्ध होते रहे यह लुका छिपी का खेल लगभग 8 वर्ष 1538 ई. तक चलता रहा। अफ़गान सरदारों को शेरशाह सूरी के रूप में एक योग्य तथा बहादुर सेनापति मिल गया जिसने बंगाल और बिहार पर अपना नियंत्रण कर लिया।

शेरशाह सूरी के विद्रोह से निपटने के लिये हुमांयू दिल्ली से विशाल मुग़ल सेना के साथ बिहार के लिये रवाना हुआ बक्सर के निकट चौसा के

मैदान में हुमायूं और शेरशाह सूरी के मध्य एक भयंकर युद्ध हुआ जिसमें हुमायूं को पराजय का सामना करना पड़ा। हुमांयू अपने परिजनों के साथ किसी प्रकार जान बचा कर निराश, हताश तथा टूटा हुआ लखनऊ पहुंचा जहां शेरशाह सूरी की लूटपाट से परेशान और तपे हुए शेखज़ादों ने हुमांयू को 50 घोड़े और 1000 चांदी के सिक्के देकर मदद की और उसके सकुशल 1540 ई. में आगरा पहुंचने की व्यवस्था की। शेरशाह सूरी ने अपने को दिल्ली का सम्राट घोषित कर दिया और हुमांयू का बराबर पीछा करता रहा। उसने हुमांयू को कन्नौज के युद्ध में पुनः पराजित किया और पंजाब की सीमा तक उसका पीछा किया। शेरशाह सूरी 1543 ई. में उसको भारत की सीमा से खदेड़ने में सफ़ल हो गया। यद्यपि 1527 ई. तक लखनऊ नगर पर हुमांयू का सीधा नियंत्रण रहा पर अफ़गान सरदारों से निरन्तर युद्धों में उलझे रहने के कारण वह इस नगर के विकास में कोई विशेष योगदान नहीं दे सका। उसका सारा जीवन संघर्ष करते व्यतीत हुआ।

शेरशाह सूरी ने सत्ता पर अधिकार करने के पश्चात लखनऊ के सामरिक महत्व को ध्यान में रखते हुए दिल्ली से लखनऊ तक के क्षेत्र के शासन का भार ईशा खां को सौपा। उसने लखनऊ क्षेत्र का शासक कादिर खां को नियुक्त किया और चौपटियां के निकट तांबे के सिक्के ढालने की एक टकसाल स्थापित की। शेरशाह सूरी की विजय को यादगार बनाने के लिये लखनऊ की टकसाल से एक चांदी का सिक्का ज़र्ब–ए लखनऊ नाम से जारी किया गया। शेरशाह सूरी ने सेना के सुगम यातायात के लिये पेशावर से बंगाल तक एक मार्ग का निर्माण कराया जिसे अब Grand Trunk Road कहा जाता है। शेरशाह सूरी की 22 मई 1545 ई. में म त्यु के पश्चात उसके पुत्र जलाल शाह ने शासन संभाला पर अफ़गानों में आपसी मनमुटाव के कारण विद्रोह आरम्भ हो गया। हुमांयू ने ईरान के शाह से सैनिक सहायता लेकर पुनः आक्रमण कर दिया और 1555 ई. में आदिल शाह के सेनापति हेमु को पानीपत के द्वितीय युद्ध में परास्त कर दिल्ली पर कब्ज़ा कर लिया। हुमांयू की अपने पुस्तकालय में सीढ़ियों से गिर जाने के कारण 1556 ई. में म त्यु हो गई। उसके पुत्र जलालुद्दीन अकबर ने तब केवल 14 वर्ष की आयु में शासन संभाला।

अकबर यों तो एक अनपढ़ व्यक्ति था पर वह एक कुशल और दूरदर्शी शासक था। उसने आगरा के निकट फ़तेहपुरसीकरी को अपनी राजधानी बनाया। अपने दरबार में विद्वान नौरत्न नियुक्त किये तथा राजपूतों की शक्ति को अपने पक्ष में करने के लिये आमेर रियासत के राजपूत राजा भारमल की पुत्री हरखूबाई (जोधा बाई) से विवाह किया। उसको आभास हो गया था कि भारत में मंगोल परम्पराओं को चलाना कठिन होगा इसलिये उसने दीन–ए–इलाही नाम का एक नया धर्म चला दिया। देश को चुस्त प्रशासन प्रदान करने के लिये 12 सूबों का गठन किया और अवध का सूबेदार बिजनौर गांव के शेख अब्दुर्र रहीम को नियुक्त किया। शेख अब्दुर्र रहीम ने लक्ष्मण टीले के पास प्राचीन दुर्ग के अवशेषों पर एक विशाल किले का शेखों की शक्ति के प्रतीक के रूप में निर्माण कराया। कहा जाता है कि इस किले में प्रवेश के लिये 26 द्वार थे और हर द्वार पर एक मछलियों का जोड़ा बना हुआ था जिसके कारण यह मच्छी बावन कहलाता था जो बाद में बिगड़ कर मच्छी भवन हो गया।

कहा जाता है कि किसी ज्योतिषी ने अकबर के जीवन के लिये कुछ पल ख़तरे के बताये थे और सुझाव दिया था कि यदि कोई उसकी पगड़ी बदल ले तो अकबर की जान बच सकती है। कोई भी दरबारी पगड़ी बदलने का साहस नहीं जुटा सका। अब्दुर्र रहीम एक छोटा मनसबदार था। वह इस काम के लिये राज़ी हो गया। उस पगड़ी में सांप था जब पगड़ी बदली गयी तो सांप गिर गया और इस प्रकार अकबर की जान बच गई और शेख अब्दुर्र रहीम अकबर का विश्वासपात्र बन गया।

शेख़ अब्दुर्र रहीम ने कृष्णा महाराजिन नाम की एक धनी ब्राह्मणी से बलपूर्वक विवाह किया। नादान महल रोड पर स्थित प्राचीन देवी के मन्दिर को ध्वस्त कर वहां एक मस्जिद तथा मच्छी भवन के निकट अपने आवास के लिए पंच महल का निर्माण कराया।

अकबर के शासन काल में महाकवि तुलसीदास अपने ग्रंथ रामचरित्रमानस के सम्बंध में 1560 ई. में लखनऊ आये। वे पूजा अर्चना के लिये छाछी कुआं में स्थित हनुमान मन्दिर गये तथा लक्ष्मण टीले पर स्थित

शेषनाग मन्दिर में आहूती दी जो उस समय एक महान तीर्थराज माना जाता था और वहां काफी बड़ी संख्या में बाजपेई ब्राह्मण रहते थे। जो परिवार ऊंचाई पर रहते थे वे ऊंचे बाजपेई और जो परिवार नीचे रहते थे वे खाले के बाजपेई कहलाते थे।

1580 ई. के आसपास लखनऊ में प्रशासन की स्थिति बहुत बिगड़ गई। विद्रोह और आतंक का वातावरण बना जिसको कुचलने के लिये अकबर को एक विशाल सेना के साथ आना पड़ा। खूंखार डाकू हलाकू को अकबरी दरवाज़े में चुन दिया गया तथा चौक के मुख्य बाज़ार का निर्माण हुआ। उस डाकू का सिर काटकर जिस नाले में फ़ेका गया वह सरकटा नाला कहलाता है। इसी समय सोंधी टोला और कतरी टोला नाम के मोहल्ले आबाद हुए। उसके एक सरदार पीर मोहम्मद खां के नाम से नया इलाका गढ़ी पीर खां बसा।

अकबर का पुत्र राजकुमार सलीम (जहांगीर) अपनी युवावस्था में काफ़ी उदण्ड हो गया और मदिरा पान करने लगा। उसको अनारकली नाम की एक तवायफ़ से प्रेम हो गया जो अकबर को पसन्द नहीं था। अकबर ने अनारकली को लाहौर में दीवार में चुनवा दिया। सलीम विद्रोह कर के इलाहाबाद में रहने लगा। उसने लखनऊ में चौक के निकट मिर्ज़ा मण्डी नाम का मोहल्ला बसाया।

1568 ई. में मेंहदी कासिम खां अवध का सूबेदार बना। उसकी लखनऊ में 1574 ई. में म त्यु हो गयी। अकबर के शासन के अन्तिम चरण में जवाहर खां सूबेदार था जब लखनऊ में उसके नायब कासिम महमूद के नाम पर महमूदनगर और शाहगंज मोहल्ले बसे।

अकबर की 1605 ई. में म त्यु के बाद उसका पुत्र नूरूद्दीन जहांगीर मुगल सम्राट बना। यद्यपि उसका ध्यान कश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य पर अधिक केन्द्रित रहा पर लखनऊ का अपना अलग महत्व बना रहा। उसके शासन काल में आये एक फ्रांसीसी व्यापारी डेलाट ने लखनऊ को एक महत्वपूर्ण नगर माना। उसने जहांगीर से सनद लेकर यहां घोड़ों का व्यापार आरम्भ किया और काफ़ी धन कमाया। उसने अपने आवास के लिये एक विशाल भवन का निर्माण

कराया जो फिरंगी महल कहलाता है। वह कुछ वर्ष पश्चात अपने देश फ्रांस चला गया।

अंग्रेज़ों की भारत में आमद

जहांगीर के शासन काल में अंग्रेज़ व्यापार करने के उद्देश्य से आये जिसके लिये उन्होंने लन्दन में महारानी एलिज़ाबेथ प्रथम (1553–1603) के चार्टर द्वारा 31 दिसम्बर 1600 ई. को ईस्ट इण्डिया कम्पनी का गठन किया। सर टॉमस रो नाम के प्रथम अंग्रेज राजदूत ने 1618 ई. में जहांगीर से भारत में व्यापार करने की अनुमति ली। भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का कार्यालय 1633 ई. में खोला गया और उसका मुख्यालय 1690 ई. में कलकत्ता में स्थापित किया गया जहांगीर की 1627 ई. में कश्मीर में म त्यु हो गई जिसके पश्चात उसका पुत्र शहाबुद्दीन शाहजहां राज सिंहासन पर विराजमान हुआ।

शाहजहां के शासन काल में लखनऊ का समग्र विकास हुआ। उसने सुल्तान अली शाह कुली खां को सूबेदार नियुक्त किया जिसने सैय्यद निज़ाम मुर्तज़ा खां को लखनऊ का फौजदार नियुक्त किया। उसके दो पुत्र फ़ाजिल और मंसूर के नाम पर फ़ाज़िलनगर और मंसूरनगर आबाद हुए। कुली खां के बाद मुमताज सूबेदार बना जिसके भाई मोहम्मद अशरफ ने अशर्फ़ाबाद बसाया। उसके दूसरे भाई मोहम्मद मुशर्रफ़ ने मुशर्फ़ाबाद तथा नौबस्ता मुहल्लों को बसाया। शाहजहां को 1658 ई. में आगरा के किले में उसके पुत्र मोईउद्दीन औरंगज़ेब ने नज़र बन्द करके अपने को सम्राट घोषित कर दिया। शाहजहां अपनी प्रिय बेगम मुमताज का मकबरा ताजमहल किले से दिन भर निहारता रहता था और केवल चना खाता था।

औरंगज़ेब एक बहुत ही क्रूर और निर्दयी शासक था। उसने अनेक मन्दिर ध्वस्त किये जिनमें मथुरा में श्री कृष्ण का जन्म स्थान और काशी में बाबा विश्वनाथ का मन्दिर प्रमुख हैं तथा उनकी सामग्री से मस्जिदें तामीर कर दी। सिखों के नवे गुरू तेगबहादुर 1675 ई. में पटना से आनन्दपुर जाते समय लखनऊ के यहियागंज मोहल्ले में ठहरे थे जहां गुरूद्वारें में आज भी उनके स्म ति चिह्न रखे हुए हैं औरंगज़ेब ने अपने लाव लश्कर के साथ 1685

ई. में लखनऊ में प्रवेश किया और लक्ष्मण टीले पर स्थित प्राचीन शेषनाग के मन्दिर को ध्वस्त कर वहां मस्ज़िद का निर्माण कराया। वह आलमगीर के नाम से जाना जाता था। लखनऊ में आलमनगर मोहल्ला उसी के नाम से बसा। औरंगज़ेब की 1707 ई. में म त्यु के पश्चात मुगल साम्राज्य का पतन आरम्भ हो गया। उसके उत्तराधिकारी मुग़ल शासक अयोग्य सिद्ध हुए। उनकी शासन पर पकड़ निरन्तर ढ़ीली पड़ती चली गई और एक के बाद एक सूबेदार अपने को स्वतंत्र शासक घोषित करने लगे।

अवध में नवाबी युग का शुभारम्भ

मुग़ल सम्राट जब कभी भी किसी युद्ध पर जाते थे तो उनके लाव–लश्कर के साथ उनकी बेगमें और बेहतरीन तवायफें भी मनोरंजन के लिये जाती थी। 1719 ई. में जब मोहम्मद शाह 'रंगीले' ने शासन संभाला तो उसके दरबार में कहा जाता है तवायफों का दबदबा बना रहा जिसके कारण एक अजब सा लबड़–झबड़ का माहौल बना। जिसका लाभ उठाकर लखनऊ में शेखज़ादों ने विद्रोह कर दिया। उस समय अवध का सूबेदार गिरधर नागर था जो शेखज़दों के आंतक पर प्रभावी तरीके से अंकुश नहीं लगा पा रहा था। नगर में हर तरफ अराजकता का वातावरण व्याप्त था। शेखज़ादे एक दम निरंकुश हो गये थे और वे हर समय बवाल काटने लगे थे। जो भी कोई राहगीर मच्छी भवन के सामने से गुज़रने की हिमाकत करता उसको वे लम्बे–लम्बे कोड़ों से पीटते थे।

कानून और व्यवस्था नाम की कोई चीज़ नहीं रह गई थी। मोहम्मद शाह ने तब 1722 ई. में आंगरा के सूबेदार सआदत खां बुरहानउलमुल्क को अवध का सूबेदार बना कर भेजा। जिसने आक्रमण करके लखनऊ को शेखज़ादों के आतंक से मुक्त कराया और अवध में नवाबी युग का सूत्रपात किया। उसने लखनऊ के स्थान पर अयोध्या के निकट बंगला को अपनी राजधानी बनाया।

इस अभूतपूर्व विजय के पश्चात साआदत खां बुरहानुलमुल्क के हौंसले बुलन्द हो गये और वह दिल्ली के राजसिंहासन पर बैठने का दिवास्वप्न देखने

लगे। अपने स्वप्न को एक साकार रूप देने के लिये उन्होंने अपने मुल्क फ़ारस के शासक नादिर शाह को दिल्ली पर आक्रमण करने का एक गुप्त सन्देश भेजा और उसको सहायता करने का आश्वासन दिया। नादिर शाह ने 1739 ई. में दिल्ली पर एक भयंकर आक्रमण कर दिया। मोहम्मद शाह युद्ध लड़ने के स्थान पर भाग कर छुप गया। नादिर शाह के सैनिकों ने 3 दिन तक दिल्ली की गलियों में जमकर लूट–पाट और कत्ले आम किया। मोहम्मद शाह को कुछ विश्वासपात्रों ने सआदत खां बुरहानुलमुल्क के षडयंत्र की जानकारी दी। सआदत खां बुरहानुलमुल्क ने फांसी पर लटका दिये जाने के भय से 20 मार्च 1739 ई. को विषपान करके आत्महत्या कर ली। उसकी इस आकस्मिक म त्यु के पश्चात अवध की सूबेदारी को लेकर उसके भतीजे शेर जंग तथा भांजे सफ़दर जंग में आपस में ठन गई दोनों अपनी–अपनी दावेदारी प्रस्तुत करने लगे। तब सफ़दरजंग ने नादिर शाह को एक मोटी रकम देकर अवध की सूबेदारी प्राप्त की और साथ ही साथ उसको भारत का नायब वज़ीर बनाया गया। शेर जंग को तुष्ट करने के लिये कश्मीर का सूबेदार नियुक्त कर दिया गया। नादिर शाह लाल किले से हीरे जवाहरात तथा तख्त–ए–ताऊस लेकर अपने देश फ़ारस (ईरान) चला गया।

सफ़दर जंग के नायब वजीर बनने के बाद लखनऊ में अपने नाम के पहले नवाब कहने का चलन आरम्भ हुआ जो वास्तव में अरबी भाषा के शब्द नायब का बिगड़ा हुआ स्वरूप है। सफ़दर जंग ने लखनऊ में क्षतिग्रस्त मच्छी भवन के किले तथा पंच महल का पुनः निर्माण कराया पर उसका अधिक समय दिल्ली में ही व्यतीत होता था। मुग़ल सम्राट मोहम्मद शाह की 1748 ई. में म त्यु के पश्चात अहमद शाह सम्राट बना पर 4 वर्ष बाद काबुल के शासक अहमद शाह अब्दाली ने 1752 ई. में आक्रमण कर कश्मीर को अपने राज्य का एक अंग बना लिया, जिससे मुग़ल साम्राज्य और अधिक कमज़ोर हो गया। सफ़दर जंग की लखनऊ पर पकड़ कभी भी मज़बूत नहीं बन पायी। उनके विरूद्ध मुगल, पठान और तुर्क सरदार निरन्तर विद्रोह करते रहे। सफ़दर जंग की पठानों से युद्ध करते समय 5 अक्टूबर 1754 ई. को म त्यु हो गयी। उनके शव को फैज़ाबाद लाकर दफ़न कर दिया गया। उनके पुत्र

शुजाउद्दौला ने बाद में दिल्ली में एक भव्य मकबरा बनवाया जिसमें सफ़दर जंग के शव को पुनः दफ़न कर दिया गया।

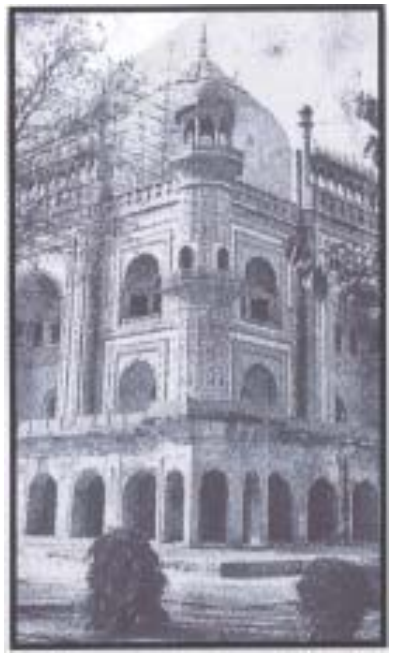

सफ़दरजंग का मकबरा दिल्ली

शुजाउद्दौला एक बहुत ही कड़क व्यक्ति था और औरतों का बेहद शौक़ीन था। उसके हरम में हर धर्म और जाति की औरतें थीं। वह एक प्रकार से अपने समय का casanova था। उसके इसी स्वभाव के कारण उसके शासन काल में दिल्ली की कुछ चुनिन्दा तवायफ़ों ने फ़ैज़ाबाद आकर अपना धन्धा शुरू किया। जब शुजाउद्दौला ने कुछ समय के लिये 1762 ई. में लखनऊ को अपनी राजधानी बनाया तो चौक के मुख्य बाज़ार में तवायफ़ों के कोठे आबाद होने शुरू हुए। शाम को मुजरों की महफिलें सजायी जाने लगीं। बड़े–बड़े रईसज़ादे, उमरा, मनसबदार, जागीरदार, पूंजीपति तथा भू–स्वामी हाथों में फूलों के गजरे लिये हुए और कानों में बेहतरीन इत्र के फाये लगाये हुए तवायफों के कोठों पर पूरी आन, बान और शान के साथ जाने लगे जो लखनऊ की नयी पनप रही संस्कृति का एक अंग बन गया और जिसको लखनऊवासी बड़े गौरव के साथ शामें अवध कहने लगे।

अंग्रेजों का बंगाल पर कब्ज़ा

बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला ने किसी बात पर रूष्ट होकर कम्पनी के कुछ अंग्रेज़ अधिकारियों को एक छोटी सी कोठरी में ठूंस दिया जिसमें दम घुटने से उनकी म त्यु हो गयी। उस समय रार्बट क्लाइव कम्पनी का मुखिया था। उसने नवाब सिराजुद्दौला के दामाद मीर जाफ़र से मिलकर नवाब सिराजुद्दौला को परास्त कर बंगाल को अपने कब्जे में ले लिया और 1757

ई. में प्लासी के युद्ध के पश्चात अपने को बंगाल का प्रथम गवर्नर घोषित कर दिया। उसने बाद में मीर जाफ़र की हत्या कराके मीर कासिम को बंगाल का नवाब बना दिया।

अंग्रेज़ों का अवध में हस्तक्षेप

अवध का सूबेदार नवाब शुजाउद्दौला इस घटनाक्रम से भीतर तक हिल गया। उसे अवध की सुरक्षा की चिन्ता सताने लगी। उसने मुग़ल सम्राट शाह आलम, बंगाल के नवाब मीर कासिम तथा बनारस के राजा बलवन्त सिंह से मिलकर अंग्रेज़ों पर आक्रमण कर दिया। उस समय मुनरो कम्पनी का गवर्नर था। अवध और बिहार की सीमा से लगे बक्सर के मैदान में 23 अक्टूबर 1764 ई. को शाही सेना और अंग्रेज़ों के मध्य एक भीषण युद्ध हुआ जिसमें शुजाउद्दौला की भारी पराजय हुई और उसको किसी प्रकार युद्ध भूमि से सकुशल उनके शाही रक्षकों के दल के नायक पंडित लक्ष्मी नारायण कौल शर्गा और पंडित निरंजन दास कौल शर्गा ने अपनी सुरक्षा में फर्रूखाबाद पहुंचाया जिससे प्रसन्न होकर उनको शुजाउद्दौला की मुख्य पत्नी बहू बेगम ने 200 चांदी के सिक्के वसीके के रूप में प्रतिमाह पीढ़ी दर पीढ़ी देने की सिफ़ारिश की। नवाब शुजाउद्दौला को विवश होकर 16 अक्टूबर 1765 ई. को राबर्ट क्लाइव के साथ सन्धि पर हस्ताक्षर करने पड़े और इस प्रकार अवध में अंग्रेज़ों का हस्तक्षेप आरम्भ हुआ। अवध के नवाब एक प्रकार से अंग्रेज़ों के प्यादे बन कर रह गये और हर युद्ध में अंग्रेज़ों की खुलकर सहायता करने लगे। शुजाउद्दौला ने 1773 ई. में रूहेलखण्ड को आक्रमण करके अवध का एक अंग बना दिया। विभिन्न युद्धों मे व्यस्त रहने के कारण वे लखनऊ के लिये कुछ विशेष नहीं कर पाये। उनकी 26 जनवरी 1775 ई. को केवल 46 वर्ष की आयु में म त्यु हो गयी।

लखनऊ का राजधानी के रूप में समग्र विकास

आसफ़द्दौला जब 1775 में अवध के सूबेदार बने तो उन्होंने फ़ैजाबाद के स्थान पर लखनऊ को अपनी राजधानी बनाया तब तक लखनऊ अनेक

युद्धों की विभीषिका झेल चुका था अनेक प्राचीन बस्तियां वीरान हो चुकी थीं और खण्डहरों में तबदील हो चुकी थी। अतः उन्होंने नगर को विकसित कर सुन्दर बनाने को प्राथमिकता दी। चूंकि नवाब ईरानी मूल के थे अतः तीव्र गति के साथ ईरानी वास्तुकला पर आधारित शाही महलों, इमामबाड़ों, मस्जिदों, मकबरों, दरगाहों, कर्बलाओं तथा बारादरियों का निर्माण बड़े पैमाने पर आरम्भ हुआ और धीरे–धीरे लखनऊ पर ईरानी संस्कृति का रंग चढ़ने लगा। राजा टिकैत राय ने राजा बाज़ार और टिकैत गंज मोहल्ले बसाये तथा लखनऊ के निवासियों को पीने का पानी की समस्या से निजात दिलाने के लिए एक हलब तालाब का निर्माण कराया जो अब टिकैतराय का तालाब कहलाता है। राजा झाऊलाल ने ठाकुरगंज में मक़बरा बनवाया। लखनऊ में बड़े–बड़े बाग़ और बग़ीचे विकसित किये गये जिससे यह बागों का शहर कहलाने लगा और विदेशी पर्यटक इसकी सुन्दरता पर मोहित होकर इसको पूर्व का पेरिस कहने लगे। उस समय हर व्यक्ति लखनऊ की ओर आकर्षित हो रहा था दिल्ली उजड़ रही थी और लखनऊ बस रहा था।

आसफ़उद्दौला के दरबार में फारसी भाषा के विद्वान कई कश्मीरी पंडित उच्च पदों पर आसीन थे। उन्होंने कश्मीरी मोहल्ला बसाया और अपने आवास के लिये भव्य हवादार हवेलियां निर्माण करायी। उन्होंने कई शिवालों का भी निर्माण कराया। जिन में रानी कटरा मे स्थित बड़ा शिवाला सबसे अधिक प्रसिद्ध है जिसका निर्माण 1778 ई. में पंडित जिन्दराम चौधरी तंखा ने कराया था। पंडित राज नारायण बक्शी ने कश्मीरी मोहल्ले में एक मस्जिद का निर्माण कराया जो अब खुमैनी मस्जिद कहलाती है। 1914 ई. में

रानी कटरा का बड़ा शिवाला

पंडित जगपाल कृष्ण गंजू ने अपने पितामह पंडित दयानिधान गंजू की स्म ति में लालबाग में दयानिधान पार्क तथा 1918 ई. में लखनऊ के ज़िला जज राय बहादुर पंडित श्याम मनोहर नाथ शर्गा ने कश्मीरी मोहल्ले में शर्गा पार्क विकसित किया।

लखनऊ में 1778 में भीषण आकाल पड़ा तो आसफ़उद्दौला ने राहत देने के लिये आसफी इमामबाड़े का निर्माण आरम्भ किया। कहा जाता है कि दिन की रोशनी में कारीगर इसका निर्माण करते थे और रात के अंधेरे में सम्मानित परिवार के लोग इसको गिराते थे जो बिना किसी कार्य को करे बख़शीश लेने को तैयार नहीं थे। जिसके कारण आसफ़उद्दौला की दरियादिली के लिये कहा जाने लगा कि जिसको न दे मौला, उसको दे आसफ़उद्दौला।

आसफ़उद्दौला के शासन काल में फ्रांसीसी सैनिक अधिकारी क्लाड मार्टिन लखनऊ आया। उसने नगर में कई भव्य भवन निर्माण कराये। जिसमें छतर मंजिल और लामार्टीनियर कालेज प्रमुख हैं। छठे नवाब साआदत अली खां ने अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट के लिये 1801 ई. में रेजीडेन्सी का निर्माण कराया। हकीम मेंहदी अली खां कश्मीर से आकर उनके मंत्री बने। उनके वंशज गोलागंज में मकबरा आलिया में रहने लगे। कश्मीर की प्राचीन लोक रंग परम्परा भांड–पाथर के कलाकार मनोरंजन के लिये कश्मीर से आकर पीर बुख़ारा में बसे। इस कड़ी में अन्तिम कशमीरी भांड जहांगीर था जो शाहगंज में रहता था और उत्तरप्रदेश संगीत नाटक अकादमी से पेंशन पाता था। अब लखनऊ में यह कश्मीर की लोकरंग परम्परा समाप्त हो गई है।

अवध का स्वतंत्र होना

अवध के सातवें नवाब ग़ाज़ीउद्दीन हैदर ने कम्पनी के गवर्नर जनरल लार्ड हेस्टिंग्स (1813–1823 ई.) के उकसाने पर अपने को 9 अक्टूबर 1819 ई. को अवध का बादशाह घोषित कर दिया और अपने नाम के सिक्के चलवा कर मुगल सम्राट अकबर शाह द्वितीय (1806–1837 ई.) को नज़राने के रूप में भिजवाये। मुग़ल सम्राट ने उसके इस कृत्य की भर्तसना

करते हुए फारसी में एक तल्ख शेर लिख कर जवाब दिया। ग़ाज़ीउद्दीन हैदर ने लखनऊ में कानपुर से गंगा का पानी लाने के लिये एक नहर खुदवाई पर यह योजना किसी कारण से पूरी नहीं हो सकी अब सरकार गोमती में शारदा नदी का पानी लाने की योजना बना रही है ताकि गर्मी में लखनऊवासियों की प्यास ठीक से बुझाई जा सके।

ग़ाज़ीउद्दीन हैदर ने नजफ़ शहर में बने इमामबाड़ें की तर्ज़ पर हज़रतगंज के निकट गोमती नदी के तट पर शाहनजफ़ इमामबाड़ा बनवाया। उसने गोमती नदी को पार करने के लिये लन्दन से एक लोहे के पुल का ढांचा मंगवाया पर इसी बीच उनकी 18 अक्टूबर, 1827 ई. को एक घड़ियाल द्वारा टांग निगल जाने के कारण म त्यु हो गयी। उस लोहे के पुल का ढांचा उनके पुत्र और बादशाह नसीरउद्दीन हैदर ने डालीगंज के निकट गोमती नदी पर कुशल कारीगरों की देखरेख में फिट करवाया। उन्होंने डालीगंज के निकट कुतुबपुर गांव में एक कर्बला का निर्माण कराया उसने चांद और तारे देखने के लिये तारों वाली कोठी का निर्माण कराया। इसमें उपकरण लगाने के लिये कलकत्ता से बंगाली यंत्रकार बुलाये गये जिन्होंने लखनऊ में बंगाली मोहाल बसाया और लखनऊ में बंगालियों के आने का सिलसिला आरम्भ हुआ। इन बंगालियों ने कलकत्ते में लखनऊ की सम्पन्नता और वैभव का गुणगान किया जिससे प्रेरित होकर कलकत्ता के चाइना टाऊन में रहने वाले कुछ चीनी धन कमाने के लिये लखनऊ आये और महल के निकट अपनी दुकानें खोलीं जो चाइना बाज़ार के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

अवध के तीसरे बादशाह मोहम्मद अली शाह ने हुसेनाबाद का इमामबाड़ा बनवाया। चौथे बादशाह अमजद अली शाह ने हज़रतगंज बसाया और सिब्तेनाबाद का इमामबाड़ा बनवाया। पांचवे बादशाह वाजिद अली शाह ने अपनी बेगमों के लिये 1848 ई. में केसरबाग़ का महल और अपने लिये परीखाना बनवाया। वे राग–रंग के रसिया थे और नाच–गाने में काफ़ी रूचि लेते थे। वे स्वयं भी नाटकों में भाग लेते थे इस कारण लखनऊ में पारसी रंगमंच ने ज़ोर पकड़ा और कई पारसी परिवार लखनऊ में अन्य नगरों से आकर बसे। कालका महाराज और बिन्दादीन महाराज के कथक घराने को

काफी मान्यता मिली। उस समय लखनऊ की एक तवायफ़ जिसका नाम तूती था उसकी सारे अवध में तूती बोलने लगी। हर तरफ उसके बेपनाह हुस्न, शबाब और कातिल अदाओं के चर्चे होने लगे। रामपुर के नवाब हामिद रज़ा खां उसके इश्क में दीवाने हो गये। उन्होंने तूती को रामपुर मुजरा करने का निमंत्रण भेजा और उसके सामने निकाह करने का प्रस्ताव रखा। जिसको तूती द्वारा ठुकराये जाने पर उसको शहर से दूर एक मकबरे में 1848 ई. में जिन्दा चुनवा दिया। आज भी उस मकबरे से रात मे तूती के घुंघरूओं और मुजरे की आवाज़ सुनाई देती है।

कुछ इसी प्रकार के पनप रहे माहौल के कारण कम्पनी के गवर्नर जनरल लार्ड डलहौजी ने 4 फ़रवरी 1856 ई. को 12 लाख की सालाना पेंशन लेकर वाजिद अली शाह को राज सिंहासन छोड़ने का नोटिस थमा दिया उनके आनाकानी करने पर 7 फरवरी 1856 ई. को उनको सेना के कड़े पहरे में कलक्तता ले जाकर फोर्ट विलियम में नजर बन्द कर दिया। वाजिद अली शाह को पुनः राज सिंहासन पर बैठाने के प्रयास में उनकी मां मलका किश्वर एक 110 सदस्यों का प्रतिनिधिमण्डल लेकर 16 जून 1856 ई. को इंग्लैण्ड की महारानी विक्टोरिया को एक ज्ञापन देने के लिये कलकत्ता से लन्दन के लिये रवाना हुई। जिसमें उनके मुशीरकार और वाजिद अली शाह के उस्ताद पंडित दुर्गा प्रसाद शर्गा भी शामिल थे पर इस दल को कोई सफलता हाथ नहीं लगी। वापसी पर मलका किश्वर की फ्रांस पहुचंने पर म त्यु हो गई और उनके शव को पेरिस में दफ़्न कर दिया गया। इस प्रकार अवध के नवाबी युग का अन्त हो गया और लखनऊ दासता की जंजीरों में जकड़ गया। लखनऊ में नवाबी काल में

नवाब वाजिदअली शाह

उर्दू तथा फ़ारसी भाषा की शिक्षा के लिये मकतब और मदरसे खोले गये। फिरंगी महल अरबी भाषा की शिक्षा का केन्द्र बना। दीनी तालीम के लिये मच्छी भवन किले के निकट सुल्तानुल मदारिस स्थापित किया गया। यूनानी चिकित्सा पद्धति की शिक्षा के लिये झवांई टोला में तिबिया कालेज खोला गया। रोगियों के उपचार के लिये चौक और लालबाग में दारूल शफ़ा खोले गये। ग़रीबों के लिये बाज़ार खाला में खैरातखाना और यतीमों के लिये काजमैन में यतीमख़ाना खोला गया। नगर के पश्चिमी किनारे पर रूस्तम नगर में कंजड़ बेकियों को खदेड़ कर हजरत अब्बास की दरगाह का निर्माण कराया गया जिसकी ज़ियारत करने बादशाह वर्ष में एक बार अपने पूरे लाव–लश्कर के साथ जाता था।

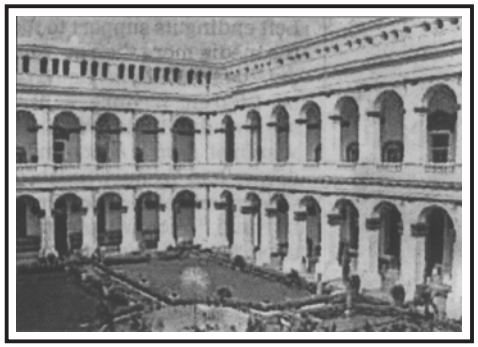

फ़ोर्ट विलियम, कलकत्ता

लखनऊ में खम खाकर आदाब अर्ज़ करने और पहले आप कहने का चलन आरम्भ हुआ अंगरखा और दुपल्ली टोपी इस नगर की ख़ास पहचान बने। बावर्चियों ने लखनऊ के खास शाही पकवान और व्यंजन ईजाद किये जिन पर चांदी और सोने के वर्क लगाये जाते थे। उसी दौर में मनोरंजन के लिये नये–नये शगल निकाले गये शतरंज, चौसर, पच्चीसी, कबूतरबाजी, पतंग, बटेर बाजी तीतर बाजी वगैरह। खाने के बाद हुक्का गुड़गुड़ाना लोग शान की बात समझने लगे। मुंह में किवाम लगी पान की गिलौरियों का जोड़ा दबा कर उगालदान में पीक मारना यहां की रवायत बन गई। नवाब शब्द का चलन इतना बढ़ा कि यहां के इक्के और तांगे वाले भी अपने को नवाब बताने लगे।

नवाबों ने ईरान का प्राचीन आर्य संस्कृति का प्रतीक नौरोज़ उत्साह के साथ 21 मार्च को मनाना आरम्भ किया जिससे नज़्र दी जाने लगी और रंग खेला जाने लगा। वे एक दूसरे के यहां 22वीं रजब को कूंडे खाने के लिये जाने लगे। मरसिया, मजलिस और मातम शहर का मिज़ाज बन गया। आग पर मातम और छुरियों का मातम एक अलग मंज़र पेश करता था। अलम,

ताबूत और ताजिये निकाले जाने लगे। नवाबों के प्रभाव में कुछ हिन्दू भी ताज़ियेदारी करने लगे। 10वीं मोहर्रम को शाही ज़री का जुलूस बहुत बड़े पैमाने पर पूरे ताम–झांम के साथ निकाला जाता था जो चौक, महमूदनगर, मन्सूरनगर और अशर्फाबाद होता हुआ तालकटोरे की कर्बला जाता था जिसको देखने के लिए लाखों का मजमा लगता था। सफर का जलूस काज़मेन से मन्सूरनगर, कश्मीरी मुहल्ले से गुजरता हुआ हज़रत अब्बास की दरगाह तक जाता था। कुल मिलाकर वर्ष में 953 इस प्रकार के जलूस निकाले जाते थे।

शेर–ओ–शायरी यहां की फिज़ा में घुल–मिल गई। हर व्यक्ति शायराना अन्दाज़ में गुफ़्तगु करता था, जिसने लखनऊ की जबान में मिठास पैदा की और एक नयी पहचान दी। नामचीन शायरों के कलाम को समाद फरमाने के लिये मुशायरों का आयोजन होने लगा। किस्सागोई की कला विकसित हुई। अफ़साना निगारी के हुनर में लोगों ने महारत हासिल की। पारसी थियेटर और नौटंकी ने लखनऊ के सांस्कृतिक इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा। अब वह सुख, चैन, सकून और अमन का लखनऊ कहां है। सुना है लखनऊ अब मेट्रो सिटी हो रहा है।

सकल पदारथ है जग माहीं।
करम हीन नर पावत नाहीं।।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद
2. यजुर्वेद
3. सामवेद
4. अथर्ववेद
5. रामायण, महर्षि वाल्मीकि
6. महाभारत, महर्षि वेदव्यास
7. इतिहास पुराण
8. विष्णु पुराण
9. हरवंश पुराण
10. छन्दोंग्य उपनिषद्
11. इण्डियन हिस्टौरिक ट्रैडिशन, पार्ज़ीटर
12. दि इम्पीरियल गज़ेटियर आफ इण्डिया, 1908
13. प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग, डा० सत्यकेतु विद्यालंकर
14. भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें, पुरशोत्तम नागेश ओक, 2006
15. शरगा–पुराण, डा० बैकुण्ठनाथ शर्गा, 2007
16. लखनऊ नवाबों से पहले डा० शिव बहादुर सिंह, 2007
17. श्रीराम आस्था और इतिहास, हृदय नारायण दीक्षित, 2008